होटल डी ताज

मन्मथनाथ गुप्त

भारती साहित्य मन्दिर
फव्वारा दिल्ली

: १ :

ताजमहल का निर्माण मुमताज़ बेगम की समाधि के रूप मे हुआ था इस बात को तो सभी जानते है। कालान्तर मे यही ताजमहल सुरुचि और सौन्दर्य के एक आदर्श रूप में स्वीकृत हो गया। पर कितना भी अच्छा हो, आखिर है तो यह एक क़ब्र ही। इसलिए यह समझ में नहीं आता कि इसके साथ संयुक्त करके होटलों का नाम क्यों रखा गया। बम्बई का ताजमहल होटल तो प्रसिद्ध है, शायद उतना ही प्रसिद्ध है, जितना स्वयं बम्बई है। पर यहाँ बम्बई के उस होटल का ज़िक्र नहीं है। यहाँ तो उत्तर भारत के एक होटल की कहानी है, जिसका नाम ताजमहल होटल नहीं बल्कि होटल डी ताज है।"

प्रसिद्ध वस्तुओं तथा व्यक्तियों के साथ अपने नाम को संयुक्त करके उनकी प्रसिद्धि या बड़प्पन का हिस्सेदार बनने की चेष्टा करना, यह तो एक बहुत स्वाभाविक बात है; पर साथ ही अनुकरण मे एक ग्लानि भी है। इसी कारण शायद होटल डी ताज के मालिक श्री नेमीचन्द ने अपने होटल का नाम सीधा-सीधा ताज-महल न रख कर होटल डी ताज रखा। ऐसा करने मे ताजमहल की बड़ाई भी आ जाती थी और साथ-ही बम्बई के ताजमहल होटल की जूठन होने से भी रक्षा होती थी। इन बातों के अलावा डी लगाने से कुछ कॉन्टीनेन्टल धारणा भी आजाती थी।

यह तो अनुमान की बात हुई। असल में नेमीचन्द ने अपने होटल का नाम होटल डी ताज क्यों रखा था, यह कौन जाने। शायद कुछ नाम रखना था, इसलिए उसने एक नाम रख दिया, जैसा हम अपने लड़के-लड़कियों का नाम रख देते हैं। या ऐसा भी हो सकता

है कि सोच-समझ कर एक नाम रखने की कोशिश करते-करते थककर जो नाम सामने आगया, उसे अपना लिया गया हो। खैर, इस विषय को छोड़ा जाय।

जंकशन स्टेशन के पास होने के कारण इस होटल में खूब चहल-पहल रहती थी। न मालूम किस योग के कारण, शायद केवल संयोग के ही कारण किसान-सभा वालों को दफ्तर के लिये मकान मिला, तो होटल डी ताज के सामने वाला मकान मिला। सभा के संस्थापक, सभापति, मंत्री या जो कुछ भी कहिये सब दो ही व्यक्ति थे, एक अर्णवकुमार और दूसरा कन्हैयालाल। अवश्य और भी लोग थे, पर वे बहुत कुछ अलंकार के रूप में थे। यह दूसरे महायुद्ध के पहले की बात है।

अभी किसान-सभा का दफ्तर ढंग से लग भी नहीं पाया था, साइनबोर्ड तो लग गया था, पर झंडा अभी नदारद था कि लोगों ने आकर खबर देना शुरू किया कि इस मकान में पहले कोई भी शरीफ किरायादार टिक नहीं पाया। कन्हैयालाल ने पहले ही इस बात को सुना था, पर उसने इस पर विश्वास नहीं किया था। अब उन लोगों ने खबर देने वालों से पूछा कि आखिर ऐसी कौन-सी बात है जिसके कारण यहाँ कोई किरायादार टिक नही पाता। इसके उत्तर में लोगों ने इशारे से सामने के होटल की तरफ दिखा कर कहा ···उस··· उस लिये। उस होटल के कारण कोई भी शरीफ किरायादार टिक नहीं पाता।

किसान-सभा के दोनों कार्यकर्त्ताओं ने होटल की तरफ ध्यान से देखा, पर कुछ पता नहीं लगा। इस मकान से होटल के सात आठ कमरों को देखा जा सकता था, साथ ही जिस गलियारे से होकर लोग ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर जाते थे, वह भी दिखाई पड़ता था; पर उनमें कहीं कोई बात ऐसी नहीं थी जिससे

कोई संदिग्धता झलकती हो। फिर भी इतने लोग कह रहे थे, कोई बात तो होगी ही। अर्णवकुमार ने पड़ोसियों से पूछा, तो कोई बात स्पष्ट नहीं हुई। दोनों में से कोई भी भूत-प्रेत में विश्वास नहीं करता था, फिर भी लोगों की बातों से कुछ अजीबतो मालूम होता ही था। उन्होंने लोगों से ब्यौरे में सारी बात जानना चाहा, तो लोगों ने रहस्यजनक रूप से कहा.....मालूम हो जायगा।

इसलिये दोनों मित्र प्रतीक्षा करने लगे। कन्हैयालाल ने कहा...इन लोगों की भली चलाई। भला यहाँ कौन-सा हौआ बैठा है जिससे हम लोग डर जायेंगे। जब ब्रिटिश सरकार से नही डरते, तो यहाँ किसका डर पड़ा है...कहकर उसने अवज्ञासूचक तरीके से हं : कहा। यह स्पष्ट था कि उसने जो बात कही थी उसे स्वयं ही उस बात से सन्तोष नहीं था। उसने मानो अपने सामने तर्क देते हुए कहा—हो सकता है कि किसी कारण से लोग इस मकान के मालिक से नाखुश हों, इसलिये भाँजी मार रहे हों।

अर्णवकुमार अपेक्षाकृत गम्भीर था, इस कारण वह इतने दूर तक जाने के लिये तैयार नहीं था क्योंकि उसे खबर मिली थी कि उन लोगों के आने के पहले यहाँ एक अध्यापक महोदय सपरिवार रहते थे, पर वे पन्द्रह दिन से अधिक समय तक टिक नहीं पाये थे। इसके पहले एक मारवाड़ी सज्जन थे, वे तो छः दिन मे ही भाग गये थे। ऐसी बहुत सी बाते सुनी गयी थीं। इसलिये कुछ तो विश्वास करना ही पड़ा।

पर जल्दी ही जिले मे कई किसान सम्मेलन होने वाले थे। गाँव-गाँव मे घूमना था, इस कारण दो दिन रहकर ही दोनों कार्यकर्त्ता गाँवों के लिये रवाना हो गये। दोनों ने दो झोले लिये, और विभिन्न दिशाओं में निकल पड़े। सम्मेलन हुए, सभा के सदस्य बनाये गये, किधर से समय निकल गया कुछ पता नहीं लगा। मकान मे जो ताला लगाया गया था उसकी एक चाभी

अर्णवकुमार के पास और दूसरी कन्हैयालाल के पास रही। उद्देश्य यह था कि जो जिस समय चाहे लौट सके।

आठ दिन इधर-उधर घूमने के बाद अर्णवकुमार सभा के दफ्तर में लौटा। उस समय रात के दस बज चुके थे। अर्णवकुमार ने दूर से देखा तो सभा के दफ्तर में कहीं कोई रोशनी नहीं मालूम पड़ी। इसका मतलब यह था कि कन्हैयालाल अभी तक लौटा नहीं था। अर्णवकुमार का मन स्नेह के रस से सिक्त हो गया। यह लड़का अच्छा काम करता है। गाँव-गाँव मे घूमकर इसने अच्छा संगठन किया है। न खाने की परवाह है न सोने की। दिन भर मे कहीं कच्ची-पक्की एक बार मिल जाय, तो उतना ही उसके लिए काफी था। यदि किसी दिन वह भी नहीं मिली तो उसकी भी परवाह नहीं थी। आदर्श किसान कार्यकर्त्ता था। एक-एक ज़िले मे ऐसे दस कार्यकर्त्ता हों, तो बस क्रान्ति हो जाय।

इस प्रकार सोचते-सोचते अर्णवकुमार आकर सभा के मकान के दरवाजे पर खड़ा हो गया। उसने अपने खद्दर के झोले से चाभी निकाली। पर यह क्या ? जहाँ ताला होना चाहिये, वहाँ तो उसका पता नहीं था। अर्णवकुमार न तो कोई कुसंस्कारग्रस्त व्यक्ति था और न आसानी से डरने वाला था, फिर भी एक बार तो उसके रोंगटे खड़े हो ही गये। बड़ी अजीब बात थी। आखिर यह ताला कहाँ गया। एक साथ उसे इस मकान के पहले के किरायेदार अध्यापक महोदय तथा मारवाड़ी सज्जन को याद आयी। एकाएक उसे यह स्मरण हो आया कि सम्भव है यह भूत-प्रेत का काम न होकर चोरों का काम हो। पर चोर भी यहाँ क्या करने आते ? यहाँ तो कुछ कागज़ात और दो-चार कपड़ों के अलावा कुछ नहीं है। चोरों के सम्बन्ध मे वह अपने जेलजीवन से यह जान चुका था कि वे खूब पता लेकर तभी चोरी करने जाते हैं। यदि कोई नया चोर रहा हो, तो उसे निराशा ही हुई होगी।

सामने के होटल मे उस समय खूब चहल-पहल थी। सड़क पर भी गाड़ियों तथा लोगों का आना-जाना जारी था। इस शहर मे विशेषकर इस सड़क में दस बजे रात संध्या के ही समान है। भय का कोई करण नहीं था। यदि चोर आया भी हो तो वह कोई बैठा तो होगा नहीं। ताले को नदारद देखकर अर्णवकुमार की पहले जैसे सिट्टी-पिट्टी जाती रही थी, अब वह बात नहीं थी। सामने के होटल तथा सड़क की ओर दृष्टि दौड़ाने के कारण वह बहुत कुछ शान्त हो चुका था। न मालूम क्या सोचकर, शायद यह सोचकर कि अन्त तक तमाशे को देखा जाय, उसने दरवाजे पर ज़ोर से धक्का मारा। दरवाजे शब्द करते हुए खुल गये, और दीवार से जाकर लगे।

दरवाजों के खुल जाने से समस्या हल न होकर और जटिल हो गयी। अब अर्णवकुमार के सामने यह समस्या थी कि भीतर जाय या न जाय। जिस गलियारे से होकर जाना था, वह अन्धेरा था। अवश्य दियासलाई जलाते हुए वह आगे बढ़ सकता था, फिर भी वह कुछ हिचका। भूत-प्रेतों से उसे भय नहीं था, पर उसे आदमियों से डर लगता था। न मालूम मनुष्य क्या-क्या कर सकता है। ज़िले के ज़मींदार उससे चिढ़े हुए थे, और दो चार बार यह सुना गया था कि वे लोग उस पर घातक हमला करवाना चाहते थे। यदि अर्णवकुमार गहराई से सोचता तो भय का यह कारण न रहता, पर भय और गहराई के साथ सोचना ये दोनों परस्पर विरुद्ध शब्द है। यदि मनुष्य गहराई तक सोचे, तो वह डरे ही क्यों। भय मे मनुष्य सोच नहीं पाता। विचारों पर जैसे एक पपड़ी पड़ जाती है जिससे नीचे की वस्तु दिखाई नहीं देती।

अर्णवकुमार खुले हुए दरवाजे के सन्मुख खड़ा होकर अभी सोच ही रहा था कि दियासलाई जलाकर आगे बढ़े या नहीं कि ऐसा मालूम हुआ कि मकान के अन्दर कोई चल-फिर रहा है। जलाई

हुई दियासलाई बुझ गयी और अर्णवकुमार एक बार सन्नाटे मे आ गया। भीतर की वह आहट इधर ही आती मालूम हुई, और थोड़ी ही देर मे उसके सामने आकर कन्हैयालाल खड़ा हो गया।

कन्हैयालाल को इस प्रकार अन्धेरे मे आते देखकर अर्णवकुमार को बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर भी आश्चर्य भय से कही अधिक वरणीय था। कन्हैया ने उसके हाथ से झोला ले लिया, और दोनों साथ-साथ टटोलते हुए अँधेरे मे आगे बढ़ने लगे। अर्णव ने कहा— बत्ती क्यों नहीं जलाते ? तुमने तो मुझे करीब-करीब डरा दिया था। कहकर वह सूखी हँसी हँसा।

कन्हैया ने कहा—"डरा तो आपने मुझे दिया था। आपनें इतने जोर से दरवाजे को खोला कि मैं तो यही समझा कि शायद नासिर मियां आ गये।"

नासिर मियां एक पुलिस अफसर का नाम था जिस पर विशेषकर राजनैतिक लोगों की छानबीन का भार था। नासिर मिया का नाम सुनते ही अर्णव हहराकर हँस पड़ा। बोला—"तुम तो मुझे नासिर मियां ही समझे थे, पर मैं तो तुम्हे भूत समझ रहा था।"

दोनों फिर हहराकर हँस पड़े। बेफिक्री की हँसी जिसे केवल ये ही देशभक्त हँस सकते थे।

अर्णव ने कहा—"यह तो बताओ कि रोशनी न जलाकर घर मे बैठने का कारण क्या है ?"

कन्हैया ने कहा—"इसमे आपको आश्चर्य हुआ यह बात तो ठीक है।" फिर उसने अपने रहने के कमरे मे प्रवेश करते हुए कहा, "अभी सारी बातें आपकी समझ मे आ जायेंगी।" ..कह कर वह हँसा।

पर यह अकारण हँसी अर्णव को अच्छी नहीं लगी। उसने कहा—"बत्ती जलाओ और बताओ कि तुम्हारे तरफ के गाँवों की क्या परिस्थिति है ?"

फिर भी कन्हैया ने बत्ती नही जलाई। बोला—"परिस्थिति बाद को समझियेगा, पहले यहाँ की परिस्थिति तो समझिये"—कहकर उसने करीब-करीब फुसफुसा कर अर्णव से कहा—"सामने तो देखिये।"

अर्णव को बड़ा क्रोध आया। वह तो सवेरे से चला हुआ था, भूखा-प्यासा था, उसे ये सब बातें अच्छी नहीं लग रही थीं। फिर भी उसकी आँखे होटल की तरफ गयीं। जो कुछ देखा उससे वह चौंधिया गया। होटल का हर कमरा रोशनी से जगमगा रहा था। सबसे मजे की बात यह है कि इन कमरों के लोग यह नहीं जान रहे थे कि उनके बगल के कमरो मे क्या हो रहा है, पर अर्णव और कन्हैया सबको एक साथ देख रहे थे।

कन्हैया ने कहा—"यह इस शहर का नाइट लाइफ है, समझे न।"

अर्णव अपने को कन्हैया से ऊँचे दर्जे का कार्यकर्त्ता बल्कि नेता समझता था। मन-ही-मन वह कन्हैया को अपना चेला मानता था। इस कारण उसने अपने बड़प्पन को कायम रखते हुए कुछ कड़वेपन के साथ कहा—"नाइट लाइफ! हमे इससे क्या मतलब? किसे नहीं मालूम कि धनी लोग अपने धन का इस प्रकार से दुरुपयोग करते है। किसानों की हालत तो रोज देखता रहता हूँ, और इनकी हालत देख रहा हूँ। इसी कारण तो पूँजीवाद का नाश होना आवश्यक है।"

कन्हैयालाल इस समय पूँजीवाद के नाश के लिये कोई विशेष लालायित नहीं था। उसने अर्णव की वाक्यधारा को बीच मे रोकते हुए कहा—"धीरे बोलिये, धीरे। उसने स्वयं ही बहुत धीरे इस बात को कहा।"

"क्यों?"

अगर होटल के लोग जान जाँय कि सामने के मकान में लोग हैं, और हम उनकी लीला को देख रहे है, तो वे स्वच्छन्द होकर लीला न कर सकेंगे।

न कर सकें तो बलाय से। हम लोग तो इनके सुख के मार्ग में काँटे की तरह हैं, और हमेशा रहेंगे। अब तुम बत्ती जलाओ। मुझे इसमें कोई विशेष दिलचस्पी नहीं है।—कहकर वह स्वयं ही बत्ती की स्विच की ओर बढ़ा।

पर कन्हैया ने उसे करीब-करीब ज़बर्दस्ती रोक दिया, और बोला—"ठहरिये न, ज़रा चेहरों को ध्यान से तो देखिये—कहकर उसने होटल के कमरे की ओर इशारा किया।

अर्णव ने बिगड़ैल घोड़े की तरह उधर देखने से इन्कार किया, बोला—"यह सब देखा हुआ है। एक ही दृष्टि मे मैंने सारी बात देख ली। उसमें देखना ही क्या है? किसानों और ग़रीबों से लूटे हुए धन को यहाँ पर उड़ाया जा रहा है। मुझे तो भूख लगी है कुछ खाने-पीने की चीज़ हो, तो लाओ, खा-पीकर सो जाँय।

पर कन्हैया ने कहा—"मैंने बहुत सुन्दर खिचड़ी पकाई है। खाना कोई भागा नहीं जा रहा है, पर उधर देख तो लीजिये।"

खिचड़ी तैयार है जानकर अर्णव का क्रोध शान्त हो चुका था। उसे उस कमरे की तरफ़ देखना पड़ा जिधर कन्हैया ने इशारा किया था।

: २ :

बीच में एक बड़ी सी मेज लगी हुइ थी। मेज पर तरह-तरह के खाने लगे हुए थे। कुर्सियाँ चार थीं, पर आदमी तीन ही थे। कमरे के करीब-करीब बाहर होटल की वर्दी पहने हुए एक खानसामा बुत की तरह खड़ा था। जैसे रेखागणित में रेखा की कोई चौड़ाई नहीं होती, केवल लम्बाई होती है, उसी प्रकार से यह खानसामा था। हुक्म सुनने के अतिरिक्त उसमें जैसे और कोई वृत्ति ही नहीं थी। वह मेज की तरफ़ न तो देख रहा था और न मेजवालों की तरफ देख रहा था। ऐसा मालूम होता था जैसे वह बहरा हो और मेज के सामने बैठे हुए लोगों की बातचीत नहीं सुन पा रहा था। पर साथ ही इशारे से हुक्म करने पर भी वह सजग होकर उसे सुनता था। प्लेट के बाद प्लेट आ रहे थे, और साथ-ही-साथ पहले के प्लेट वापस जा रहे थे।

सामने के मकान से देखते हुए कन्हैया ने अर्णव से कहा—"देखा ? देख रहे है न ?"

अर्णव बोला—"हाँ देखा, खास बात क्या है ? तीन आदमी खा रहे हैं।" कन्हैया ने कहा—"पहचाना नहीं ?"

इसमें पहचानने की बात क्या है ! यह तो जाति ही दूसरा है। शोषकों की जाति है।

कन्हैया ने कहा—"दर्शनशास्त्र जाने दीजिये। ज़रा ध्यान से देखिये तो कि ये तीन आदमी कौन-कौन हैं।—कहकर उसने अर्णव के देखने की प्रतीक्षा बिना किये ही कहा—देखिये वह जो आदमी हम लोगों की तरफ पीठ करके बैठा है वह रामचरित्र सिंह है।"

तब अर्णव ने आँख फाड़कर देखा, बोला—"अच्छा रामचरित्र सिंह? ठीक, वही तो है। मैं नहीं समझता था कि वह ऐसी जगह पर आता है।"

यह सुनकर कन्हैया को आत्मप्रसाद का अनुभव हुआ, बोला—"अभी आपने क्या देखा है?" कहकर वह कुछ जैसे हँसा, बोला—"अब देखिये कि उनके साथ कौन-कौन है। उसकी बाईं ओर जो व्यक्ति बैठा है, वह म्युनिसिपल कमिश्नर है। रामप्रसाद पान्डेय। और उसकी दाहिनी ओर जो बैठा है वह है मिस्टर झुक्कू। यहाँ का प्रसिद्ध पूँजीपति। जिले में कुछ ज़मींदारी भी है।"

अर्णव ने कहा—"अच्छा।"

पहले से अधिक खुश होकर कन्हैया ने कहा—"मेज पर जो बोतलें रखी हुई हैं, वे काहे की हैं? आप क्या समझते हैं कि वे क्या हैं।"

अर्णव कहने ही वाला था कि शराब की बोतलें होंगी, पर कांग्रेस के नेता रामचरित्र बाबू और शराब—इन दोनों की वह एक साथ कल्पना नहीं कर सकता था। बोला—"सोडा-वोडा की बोतलें होंगी। बड़े लोग जब अति भोजन कर जाते हैं, तो उन्हें इन सब चीज़ों को पीने की ज़रूरत पड़ती है।"

कन्हैया ने कहा—"आप बहुत भोले हैं, भला बड़े आदमी कभी सोडा से सन्तोष करते हैं। अगर सोडा भी पीते हैं तो शराब के साथ।"

अर्णव बड़ी देर तक कन्हैया की लीडरी को सहन कर चुका था। झुँझलाकर बोला—"तुमने कैसे जाना कि ये शराब की बोतलें हैं? मुझे तो कुछ पता नहीं चलता। तुम कौन से बड़े शराबी रहे हो कि इस तरह की बात करते हो जैसे इस सम्बन्ध में कोई विशेषज्ञ हो।"

अर्णव को असल में यह पसन्द नहीं आया था कि खद्दर

पहने हुए तीन व्यक्तियों के विरुद्ध इस प्रकार की शिकायत की जाय। यद्यपि इन दिनों किसान-सभा और कॉंग्रेस में विरोध उत्पन्न हो चुका था, फिर भी अर्णव अपने को कॉंग्रेसियों से अलग नहीं समझता था। बल्कि गाँवों में तो उसे किसानों के सामने बहुत कुछ काँग्रेसी के रूप में पेश होना पड़ता था। गाँव वाले यही समझते थे कि ये भी कॉंग्रेसी हैं, पर कुछ गर्म विचारों के हैं। इसी कारण अर्णव ने रुखाई से बातें कहीं।

कन्हैया ने कहा—"मैं तीन दिनों से यहीं पर हूँ। मुझे सरजू से सब मालूम हो चुका है।"

"सरजू कौन ?"

सरजू इस होटल के एक नौजवान खानसामे का नाम है। मैंने सोचा कि पड़ोसियों से परिचय किया जाय, इसी नाते सरजू के साथ परिचय हुआ। हाँ, अच्छी बात याद आयी, एक होटल मज़दूर संघ क्यों न खोला जाय। इन लोगों की शिकायतें बहुत सी हैं। कल आपसे इस सम्बन्ध में बात चीत करूँगा।

अर्णव सोच रहा था कि कन्हैया ने बेकारी में तीन दिन काटे। पर नये मज़दूर संघ का नाम सुनकर उसकी बाँछें खिल गई, बोला—"ज़रूर, ज़रूर।"

कन्हैया ने कहा—"देखिये इस रामचरित्र को। इधर तो बड़ा भारी कॉंग्रेसी बनता है, और उधर बातलें उड़ती हैं।"

अर्णव ने मानो इसी बात को ज़ोर पहुँचाते हुए कहा—"जहाँ तक मालूम है, रामचरित्र के यहाँ कोई काम-धाम नहीं होता, फिर भी इस प्रकार से होटल में आकर खाता-पीता कैसे है। इसमें तो पैसे बहुत लगते होंगे। ·· कहकर उसने भौंहें टेढ़ी कर लीं।"

कन्हैया ने कहा—"ऐसे लोगों को पैसे की क्या कमी है ? बड़े-बड़े धनी—कोई म्युनिसिपैलिटी में जाना चाहता है, तो कोई ज़िला बोर्ड में जाना चाहता है—वे ही इन्हें पैसा देते हैं। बात

यह है कि वोट तो कांग्रेस के नाम से मिलता है। पहले के बेई-मान लोग धर्म और ईश्वर के नाम से कमाते थे और अब कांग्रेस और गाँधीजी के नाम से काम चलता है। जब से कांग्रेस का मंत्रिमंडल हो गया है, तब से इनके पौबारह हैं। बात यह है कि ये लोग हाकिमों के ऊपर बड़े हाकिम हो गये हैं।"

अर्णव ने कन्हैयालाल की इस कटु आलोचना को पसन्द नहीं किया। यों तो वह भी कांग्रेस का आलोचक था, पर इतना कटु आलोचक नहीं। इसके अलावा उसे यह डर था कि कन्हैया इन बातों को कम्युनिस्ट तथा अन्य वामपन्थियों के असर में आकर कह रहा है। अर्णव अपने को वामपन्थी कहता था, पर किसान सभाओं की स्वतन्त्रता में विश्वास करता था । बोला—"तुम्हारी आलोचना बहुत कड़वी है। कांग्रेस में रामचरित्र के अलावा दूसरे टाइप के भी लोग हैं।"

...इस बात को कौन अस्वीकार करता है। कांग्रेस में कुछ त्यागी और भद्र व्यक्ति हैं, तभी तो दूसरे लोग अपना चार सौ बीस चला पाते हैं। यदि कांग्रेस में सभी चार सौ बीसियों हो जायँ, तो दो चार दिनों में ही कांग्रेस का सत्यानाश हो जाय, पर वे जो थोड़े से अच्छे लोग हैं, और बीच-बीच में लोग जेल जाते रहते हैं, इसी से इन लोगों का काम चलता है। अब इन लोगों के हाथों में ताकत आ जाने से और भी सुविधा हुई है।

दोनों मित्रों में इस प्रकार से बातचीत हो रही थी कि इतने में उधर जिस कमरे में रामचरित्र बैठा हुआ था, उसमें एक स्त्री आयी। कन्हैया की आँख उधर ही लगी हुई थी। उसने एकाएक बातचीत बन्द करते हुए अर्णव की दृष्टि उधर आकर्षित की। देखते ही पता लग जाता था कि किस टाइप की स्त्री थी। कन्हैया खुश होकर बोला—"समझे न ?"

अर्णव ने कहा—"हाँ, वेश्या है न।"

हाँ, है तो वेश्या पर अपने को वेश्या नहीं कहती। यह मिस तारा है।

"मिस क्या ?"

"मिस तारा। ये हमेशा मिस ही रहती है, यह तो आपको मालूम ही होगा"—कहकर वह हँसा।

इस बात को कौन नही जानता था। पर कन्हैया को उसका नाम भी मालूम होगा, यह अर्णव को कुछ खटका। यह बात उसे करीब-करीब उतनी ही खटकी जितनी कि अभी थोड़ी देर पहले कम्युनिस्टों के द्वारा फुसलाये जाकर कांग्रेस की कटु आलोचना करना खटका था। उसने कुछ डाँट-सी बताते हुए कहा—"लाओ लाओ खिचड़ी परसो, बेकार की बातों मे न पड़ो। मुझे भूख लगी है।"

कन्हैयालाल ने उसी अँधेरे में खिचड़ी परोसना शुरू किया। अँधेरे मे तो नहीं कहना चाहिये क्योंकि सामने के कमरों से इस कमरे मे कुछ रोशनी आ रही थी, और अब अर्णव की आँखें इस अन्धकार मे देखने की अभ्यस्त हो गयी थीं। अर्णव को यह बात पसंद नहीं आयी, पर वह सचमुच भूखा था, सामने खिचड़ी आते ही उसने खाना शुरू कर दिया। कन्हैयालाल ने अपनी खिचड़ी भी परोस ली, पर उसकी आँखें बराबर होटल के उस कमरे की तरफ़ ही लगी रही। बोला—"आपने मिस तारा का नाम नहीं सुना, मिस तारा उर्फ़ छप्पनछुरी।"

अर्णव को कुछ ऐसा याद पड़ा कि उसने छप्पनपुरी का नाम सुना है; पर कैसे सुना, कब सुना, यह कुछ याद नहीं था। उसने एक गुरु गम्भीर अस्फुट शब्द किया, और बिना कुछ कहे खाना जारी रखा। कन्हैयालाल ने कहा—"शब्दार्थ से न चलिये। यों,तो छप्पनछुरी का अर्थ उससे है जिसे छप्पन बार छुरी मारी जा चुकी

है। पर अब इस शब्द का इस अर्थ से कोई सम्बन्ध नहीं रहा। पहले पहल जो छप्पनछुरी हुई होगी, उसे छप्पनबार छुरी मारी गई होगी। पर अब तो यह एक उपाधि के रूप मे रह गया जैसे महामहोपाध्याय या शमशुतुलमा, या रायबहादुर सी० आई० ई० इत्यादि। पहली छप्पनछुरी बहुत सुन्दरी रही होगी, इस कारण जो भी वेश्या या मिस अपने को सुन्दरी समझती है, वह छप्पनछुरी उपाधि ले लेती है—कहकर उसने यह देखना चाहा कि अर्णव पर क्या असर हुआ, पर उतनी अपूर्ण रोशनी म पता नहीं चला। वह अर्णव को बहुत सम्मान की दृष्टि से देखता था, पर जैसा कि अक्सर सम्मान मे भी होता है वह कई मामलों मे अर्णव को निरा बुद्धू समझता था।

खिचड़ी खाने के कारण अर्णव का चिड़चिड़ापन दूर हो चुका था. वह बोला—" ··यह तो बड़ा दिलचस्प है" ··कहकर उसने डकार लिया और फिर खाने लगा।

कन्हैयालाल प्रोत्साहन पाकर बोला—"संभव है कि इस स्त्री के शरीर पर छुरी का एक भी दाग न हो, फिर भी वह छप्पन-छुरी है। बात यह है कि अहिंसावादियों से ज्यादा मिला करती है इस कारण छुरी का दाग कहाँ से होता"—कहकर वह उठ गया और हाथ धोने की तैयारी करने लगा, पर उसका मुँह बन्द नहीं हुआ। बोलता गया—ध्यान से देखिये तो मालूम होगा मिस तारा गाँधी आश्रम के कपड़े पहने हुई है।

यह बात सुनकर अर्णव ने अचरज के साथ कहा—"अच्छा, यह बात बिलकुल अजीब है"—कहकर वह उठ खड़ा हुआ, और उसने ध्यान से मिस तारा के कपड़ों को देखना शुरू किया। पर इतने दूर से क्या पता लगता। बोला—"भले ही तुम्हारी सारी बात गप्प हो, पर है बहुत दिलचस्प"—कहकर वह हाथ धोने

चला गया।

जब दोनो मित्र खा-पीकर निश्चिन्त हुए, तब देखा गया कि मिस तारा भी चौथी कुर्सी पर विराजमान है, और वह अपने तीन प्रशंसकों का आकर्षण-केन्द्र बनी हुई है। भले ही मिस तारा के शरीर मे छप्पनछुरियों के दाग न हों, पर उसकी दृष्टि मे छप्पन छुरियों की धार थी, इसमें सन्देह नही। अब मेज पर से सारे प्लेट उठ गये थे, केवल बोतले और गिलासे ही दिखाई देती थी। पीना शुरू हो चुका था। बार-बार गिलासे लड़ाई जा रही थी। मजे की बात यह है कि तीन मित्र आपस मे गिलासों को गलती मे भले ही एकाध बार लड़ा लेते हों, पर सभी मिस तारा के गिलास से अपने गिलास को लड़ाने के लिये उद्विग्न दिखाई पड़ते थे, मानो इसी कृत्य के द्वारा उन्हे संभोग से प्राप्त परितृप्ति प्राप्त हो रही हो। अर्णव इनकी निर्लज्जता को देखकर हैरान हो रहा था। उसे मालूम तो था कि धनियों का जोवन इसी प्रकार का होता है, पर उसे इनके जीवन की ग्लानियों का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं था। अजीब बात थी। उसे इस समय इस दृश्य को देखकर यह अनुभव हो रहा था कि उसने जिस जीवन को चुना है वह अच्छा ही है। इनका तो नाश करना ही पड़ेगा। किसानों की हालत तो वह रोज़ देखता था। और इनकी हालत तो सामने थी।

कन्हैयालाल की अवस्था उस व्यक्ति की तरह हो रही थी जिसने कोई उद्भट अफवाह सुनी थी, और उसे जल्दी-से-जल्दी दूसरों को सुनाने के लिये उद्विग्न था। उसने अपने विषय को जारी रखते हुए कहा—"आपकी धारणा के अनुसार किसी स्त्री के लिये शायद छप्पन बार छुरी से मारा जाना कोई गौरव की बात है, पर यह दुनिया ही दूसरी है। छप्पन बार छुरियों से मारा जाना यहाँ इस बात का प्रमाण समझा जाता है कि वह बहुत ही रूपवती होगी। इसका अर्थ यह हुआ कि न मालूम कितने पुरुषों

ने उसके पीछे अपना जीवन नष्ट किया। तभी तो छप्पन बार छुरी मारे जाने की नौबत आयी।

...माफ करना मैं इसे कोई गौरव नहीं समझता, सो तुम चाहे जो भी तर्क करो।

कन्हैयालाल ने कहा—"मैं अपनी दृष्टि से थोड़े ही कह रहा हूँ। मैं तो इनकी दुनिया की बात कह रहा हूँ। जिस दुनिया मे जो गौरव समझा जाता है उसमे उसी का अनुकरण समझा जाता है। देखिये चन्द्रशेखर आज़ाद तो एक हुए पर उनके अनुकरण पर कितने लोगों ने अपने नामों के पीछे आज़ाद लगा लिया।

अर्णव कुछ नाराज़ सा होकर बोला,—"कहाँ आज़ाद और कहाँ छप्पनछुरी ? तुम्हारी उपमायें बड़ी ही बेतुकी होती हैं। जो बात कहो सोच-समझकर कहो।"

कहकर अर्णव ने सोने की तैयारी कर दी! इतने में उधर उस कमरे मे ४२ साल का ब्वाय प्लेटों मे कुछ ले आया। कन्हैया ने अर्णव की करीब-करीब खुशामद करते हुए कहा—"देखिये, देखिये, असली तमाशा तो अब होनेवाला है। ज़रा यह सब भी तो देखिये। किसानों की दुरवस्था तो रोज़ देखते हैं, ज़रा इनके चोंचले भी तो देखिये।"

तीनों मित्रों ने इन प्लेटों को मिस तारा की तरफ ही रखा। वे सोडा मिला मिलाकर शराब पीते गये। मिस तारा एक घूँट शराब की पीती तो साथ-ही-साथ प्लेट मे लाये हुए कटलेट भी खाती। यद्यपि वह कह चुकी थी कि खाकर आई थी, पर असल मे यह बात सच नहीं थी। चाट के बहाने भूख को भी शान्त करना था। यह कोई धर्मस्थान थोड़े ही था, जो जिससे जितना भी वसूल कर सके, यही यहाँ की नीति थी। और फिर मिस तारा उर्फ छप्पनछुरी का तो यही पेशा था। यद्यपि वह भूखी थी, और पेट भरने के

उद्देश्य से खा रही थी, फिर भी इस अदा से रुक-रुक कर खा रही थी मानो वह कटलेटों के प्रति और साथ-ही-साथ कटलेट के दाम देनेवालों के प्रति इच्छा के विरुद्ध रिआयत कर रही हो। तीनों मित्र उसे अपनी आँखों से निगल रहे थे। उनके चेहरों पर अच्छे खाने और शराब की लालिमा थी, पर उदासी बढ़ती जा रही थी। काव्य-मय उदासी। यद्यपि तारा सामने ही बैठी हुई थी और वह प्रत्येक के लिये उसी प्रकार से सुलभ थी जिस प्रकार से मेज पर रक्खी हुई शराब की बोतल थी, फिर भी कल्पना या नशा जो कुछ भी कह लीजिये उसके कारण उनमे से प्रत्येक को यह मालूम हो रहा था जैसे तारा न तो कभी किसी को मिली है, और न कभी किसी को मिलेगी। इसी भावना मे वे डूबते-उतराते दृष्टिगोचर हो रहे थे।

तारा इन लोगों के इस प्रकार के व्यवहार से बिल्कुल परेशान नहीं थी। वह तो अपनी पैनी दृष्टि या कटाक्ष से इनकी भूख को और बढ़ा रही थी। यद्यपि तीनों व्यक्ति मित्र थे, और उन लोगों ने सलाह करके ही तारा को बुलाया था, फिर भी अब वे तारा के कटाक्षप्रार्थी होकर एक दूसरे को प्रतिद्वन्द्वी समझ रहे थे। सब यही कोशिश कर रहे थे कि केवल वही तारा के कटाक्ष का अधिकारी हो।

जब तारा ने खूब खा पी लिया, तो उसने अपने जूठे प्लेट से एक आधा खाया हुआ चाप रामचरित्र के हाथ में थमा दिया। फिर उसकी तरफ़ मधुर कटाक्ष किया। रामचरित्र जैसे कृतकृत्य हो गया, और उसने एकही बार मे सारा चाप निगल डाला, और फिर विजय-गर्व से अपने दोनों साथियों को देखने लगा। साथियों की आँखों मे पराजय का विषाद बिल्कुल स्पष्ट था।

मिस्टर हुक्कू इस पराजय को यों ही सहने वाले व्यक्ति नहीं थे। एक प्रसिद्ध व्यापारी होने के नाते वे हार पर हार खाकर भी

जीत के लिये संग्राम करना जानते थे। वे इधर-उधर ताकने लगे, और उनकी दृष्टि तारा के सामने के एक प्लेट पर पड़ी, जिसमें एक चाप का बहुत थोड़ा-सा हिस्सा बचा था। मिस्टर हुक्कू ने चील की तरह झपट्टा मारकर उसे उठा लिया, और शायद इस डर से कि कहीं नगरपिता इस अमूल्य वस्तु को छीन न लें, एक ही बार में खा डाला। अब रह गये बिचारे नगरपिता पान्डेय जी। उन्होंने प्लेटों की तरफ दृष्टि दौड़ाई, तो वहाँ हड्डियों के सिवा कुछ नही था। एक क्षण के लिए वे निराशसे हो गये, पर वे भी दबने वाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने कुछ न देख कर तारा की शराब के गिलास को उठा लिया और यद्यपि वह लबरेज़ भरी हुई थी, फिर भी उसे एक ही साँस में पी गये।

इसके बाद तीनों मित्र एक दूसरे की तरफ़ देखने लगे, मानो वे एक दूसरे को यह कहते हों कि देख मैं भी कुछ हूँ। नगरपिताके आचरण से रामचरित्र को बड़ा क्रोध आया। अजीब बात यह है कि मिस्टर हुक्कू ने भी आज्ञा प्राप्त किये बिना जूठा चाप खा लिया था, पर रामचरित्र उस पर क्रुद्ध नहीं हुआ था। गुस्सा बड़ा समझदार होता है। मिस्टर हुक्कू से रामचरित्र का काम बनता था, उनकी एक मोटर रामचरित्र की सेवा मे ही रहा करती थी; पर नगरपिता पान्डेय तो उस पर निर्भर था। उसे काँग्रेस का समर्थन दिलाकर म्युनिसिपल कमिश्नर रामचरित्र ने हो बनाया था।

रामचरित्र ने बेताब होकर काफी ज़ोर से कहा—इतने ज़ोर से कि सामने के मकान मे अर्णव और कन्हैयालाल को इन बातों का कुछ हिस्सा सुनाई पड़ा। रामचरित्र ने कहा—"अबे तू बड़ा बेशऊर है ...।"

नगरपिता कुछ घबड़ा गये। शराब का नशा तथा मन के

खुमार के बावजूद उसने रामचरित्र की ओर डरते हुए देखा। पर संभलकर कुछ जोर से ही बोला—"क्या है ?"

"तू नहीं जानता कि न बोलकर किसी की चीज़ ले लेने को क्या कहते हैं ?"—कहकर उसने आँख तरेरी।

नगरपिता ने सबक बताने के तौर पर कहा,—"चोरी करना कहते हैं फिर कुछ रुककर बोला—पर मिस्टर हुक्कू ने भी तो लिया था।"

रामचरित्र अनजान सा बनकर बोला—"क्या लिया था ? मैंने तो कुछ नहीं देखा।"

...चाप का टुकड़ा लिया था, तुमने नहीं देखा ? मुझे तो सिर्फ सोडा मिला।

अबकी बार रामचरित्र पहले से अधिक क्रुद्ध हो गया, आँख तरेरकर बोला—"तू और हुक्कू बराबर है। जो वे कर सकते है, तू कर सकता है। अभी तो कल तक दाने-दाने की भीख माँगता था, अब साथ में उठाने बैठाने लगे तो उनकी बराबरी करने लगा।"

नगरपिता को कोई बात नहीं सूझी। वह कुछ अकचका गया था, बोला—"बराबरी कौन कर रहा है ?" कहकर फिर उसने सोचा कि शायद यह बात कुछ अच्छी नहीं रही, आखिर वह भी बिल्कुल मिट्टी का लौदा नहीं है, बोला—"पर कानून की आँखो मे तो सब बराबर है।"

कानून के बच्चे, अबकी कैसे तू म्युनिसिपल कमिश्नर बनता है, यह देख लूँगा।

हुक्कू ने बीच ही मे बोलते हुए दुलार के स्वर मे कहा—"अबकी मुझे कांग्रेस टिकट देना, मैं म्युनिसिपैलिटी का चेयरमैन बनूँगा।"

अब शराब का नशा पूरे तरीके पर चढ़ चुका था, नगरपिता हुक्कू से बोल पड़े ' "तू चेयरमैन बनेगा न तेरा बाप बनेगा ।

रामचरित्र ने अप्रासंगिक रूप से कहा—"मै कहता हूँ हुक्कू चेयरमैन बनेगा, और यह सुन ले कि हुक्कू तेरा बाप है" "कह-कर वह करीब-करीब उठकर खड़ा हो गया ।

उधर से नगरपिता उठे और इधर से रामचरित्र उठा । जो ब्वाय दरवाजे पर खड़ा था, उसने धीरे से दरवाजा बन्द कर दिया, और शायद तारा को कुछ इशारा किया । तारा अब तक एक निष्पक्ष दर्शक की तरह तमाशा देख रही थी । मारपीट की नौबत आते देखकर उसने अध्यापिका की तरह स्वर मे कहा—"तुम लोग रुको, न कोई किसी का बाप है, और न कोई किसी का दादा ' ।"

तीनों मित्र जो इस समय तारा के अस्तित्व को भूल से गये थे, डरकर उसकी तरफ देखने लगे । रामचरित्र ने क्लास के मानिटर की तरह कहा—"तुम सब लोग बैठ जाओ" कहकर वह खुद बैठ गया ।

सब लोग अपने-अपने आसन पर बैठ चुके थे । तारा ने राम-चरित्र को ध्यान से देखा । उसकी दोनों आँखें लाल सुर्ख हो रही थीं । चेहरे पर एक निर्बोध भाव था । देखते ही ज्ञात होता था कि शराब चढ़ गयी है, फिर भी वह इन दोनों पर बराबर लीडरी करता जा रहा था । यह अभ्यास के कारण था । दिन भर कोई व्यक्ति जो काम करता है, नशे मे भी अक्सर वही काम करता है । पर तारा भी अपने ढँग से हकूमत करने मे अभ्यस्त थी । वह समझ गयी कि बाकी दोनों तो दब चुके है, पर रामचरित्र अभी उभर रहा है । इसलिये बोली—"रामचरित्र तुम अभी चुप रहो ।"

रामचरित्र ने तारा को ध्यान से देखा । शायद वह कुछ

याद करने की चेष्टा कर रहा था। पर याद न कर सका। उसने कुछ नहीं कहा, और तारा की तरफ से मुँह फेर लिया।

तारा ने एक-एक करके अपने तीनों प्रेमियों को देखा, फिर अध्यापिका के स्वर मे बोली—"आखिर तुम लोग किस बात पर लड़ रहे थे? मानो उसने कुछ न देखा हो।"

हुक्कू की आँखों मे भय की भावना दृष्टिगोचर हुई। उसकी शून्य दृष्टि देखकर ज्ञात होता था, मानो वह किसी वस्तु को खोज रहा था, पर पा नहीं रहा था, बोला—"मुझे तो कुछ याद नहीं पड़ता।"

तारा ने हँसकर कहा—"याद करो।"

हुक्कू ने फिर याद करने को चेष्टा की, फिर सफल न होकर रुआँसा होकर बोला—"मालूम नहीं।"

तब तारा ने नगरपिता की ओर देखा, बोली—"तुम तो बहुत पढ़े-लिखे हो, याद करके बताओ।"

नगरपिता ने इसके उत्तर मे एक बार हुक्कू के मुँह की ओर देखा फिर रामचरित्र के मुँह की ओर देखा, फिर बोला—"कुछ याद नहीं पड़ रहा है।"

तारा ने अध्यापिका का ढँग जारी रखते हुए रामचरित्र से कहा—"तुम तो बहुत लेक्चर दिया करते हो, तुम्हीं याद करके बताओ कि किस बात पर झगड़ा हुआ था।"

रामचरित्र ने कहा—"क्या कहा?"

यह कह रही हूँ कि बताओ झगड़ा किस बात पर हुआ।

रामचरित्र को कुछ याद पड़ा। उसके मन मे चाप की एक हड्डी कौंद गयी। बोला- "जी, इस बात पर झगड़ा हुआ था"—कहकर एकाएक रुक गया, और बोला—"कुछ याद नहीं पड़ रहा है"—फिर बोला—"शायद पान्डेय ने हुक्कू को गाली दी थी।"

तारा मुस्कराई। सब चुप थे। कुछ देर तारा भी चुप रही, मानो सोच रही हो कि तमाशा किस प्रकार अच्छा रहेगा। वह भी कभी इसी समाज की थी। यौवन के प्रारम्भ में एक छोटी-सी गलती हो गयी थी। समाज के इन पिताओं की गलतियों के मुकाबले में वह गलती सचमुच बहुत छोटी थी। उसका असली नाम कुछ और ही था। यह नियमित वेश्या नहीं थी; पर होटल के मालिक नेमीचन्द के साथ उसका कुछ ऐसा बन्दोबस्त था कि सब काम होता था। वह एक शरीफ वेश्या समझी जाती थी। बात यह है कि वह एक हद तक पढ़ी-लिखी थी, और झरोखे पर नहीं बैठती थी। उसे जब भी मौका मिलता था, और नेमीचन्द की कृपा से उसे अक्सर मौका मिलता था, तभी वह समाज के इन स्तम्भों का मजाक बनाने में चूकती नहीं थी। बोली—"रामचरित्र तुमको कुछ याद है कि कौन किसका बाप है, इस पर झगड़ा चल रहा था।"

रामचरित्र को जैसे सुराग मिल गया, उसका चेहरा खिल उठा, फिर वह बोला—"जी, मैं इसका बाप हूँ" ..कहकर उसने नगर-पिता की ओर इशारा किया।

नगरपिता कुछ कह भी नहीं पाये थे कि हुक्कू ने उसकी तरफ इंगित करते हुए कहा—"मैं भी इसका बाप हूँ" कहकर वह बहुत खुश हुआ मानो कोई बहुत सुन्दर मजाक किया हो।

नगरपिता अब अपने को संभाल न सका। उसने कहा—"मैं तुम दोनों का बाप हूँ, मैं तो हूँ ही नगरपिता।"

फिर हाथापाई की नौबत आ गयी। उधर से होटल के मालिक नेमीचन्द ने दरवाजे को जरा खोलकर देखा, फिर मुस्करा कर तारा से आँख मारकर चला गया। कन्हैयालाल ने अर्णव से कहा—"यही नेमीचन्द है होटल का मालिक। शोर-गुल सुनकर आया होगा। और कोई कस्टमर होता तो उन्हें डाँट देता, पर इन्हें

कुछ न कहकर कैसे दुम दबाकर चला गया।"

पर देखा गया कि नेमीचन्द ने एक और खानसामा वहाँ भेज दिया। वह चुपके से दरवाजा खोलकर भीतर आकर खड़ा हो गया। तारा ने सब कुछ देखा। वह नहीं चाहती थी कि हाथापाई हो। यद्यपि हाथापाई होने पर तमाशा ज्यादा जमता, पर इसमे खतरे भी थे। जब इन लोगों को होश आता तो ये लोग तारा पर नाराज़ होते। इसलिए तारा ने सैनिक ढंग से काशन-सा देते हुए कहा—"चुप ·····।"

फिर तीनों चुप होकर अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। तारा बोली—"तुम लोग बड़े झगड़ालू हो जी। शर्म नहीं आती।"··· कहकर उसने बारी-बारी से सब को देखा। जिससे उसकी आँख मिलती गयी, वह आँख झपका कर सिर नीचा करता गया, मानों वे अपने दोष को समझ रहे थे। रामचरित्र ने सब से पहले सिर उठाया। उसने मेज पर रक्खी हुई अपनी गिलास मे शराब डालकर पिया। उसकी देखादेखी अन्य दो मित्रों ने भी ऐसा ही किया। कुछ देर सन्नाटा रहा। एकाएक रामचरित्र को ऐसा अनुभव हुआ जैसे वह एक छोटा बच्चा हो, और स्कूल मे बैठा हो। उसने घिघियाकर तारा से कहा—"यह पाण्डेय हर समय मुझ से लड़ता है, मेरे खिलौने छीन लेता है।"

तारा चुपके से मुस्कराई। अब तमाशा जम रहा था। ये ही समाज के नेता है। इन्हीं की श्रेणी से वह निकाली गयी है। तारा ने भूत उतारने वाले ओझों की तरह रामचरित्र से पूछा—"तुम कौन हो ?"

रामचरित्र ने तड़ाक से कहा—"मैं मुनुआँ हूँ।"

और यह कौन है ?··कहकर तारा ने नगरपिता की ओर इशारा किया।

यह बिरजू है रामचरित्र ने बिना कुछ घबड़ाये ही कहा।

मुनुआँ उसके भतीजे का नाम था, और बिरजू या ब्रजेन्द्र उसके भाई का नाम था। बच्चा बनना और साथ ही पहले का पिता बनना—ये दोनों विचार एक साथ संयुक्त हो गये थे। तारा को यह रहस्य पता नहीं था, फिर भी वह हँसी।

और यह कौन है ?······हुक्कू को दिखाकर तारा ने पूछा, और कौतूहल के साथ उत्तर की प्रतीक्षा करने लगी। उसने उसी प्रकार पूछा जैसे शिक्षक पूछते है।

रामचरित्र ने उसी प्रकार हाज़िरजवाबी से कहा···यह सरजू है···सरजू नाम उसने क्यों चुना, यह कहना कठिन है। इतना ही कहा जा सकता है कि बिरजू के साथ सरजू का अनुप्रास मिलता था इसी कारण उसने इस नाम को चुना होगा।

हुक्कू को यह नाम बिल्कुल पसन्द नहीं आया। इसलिये वह कुछ कहने जा रहा था, पर तारा ने आँखों-आँखों में ही उसे डाँट दिया। इस कारण उसके मुँह की बात मुँह मे ही रह गयी। तारा ने हुक्कू से पूछा—"सरजू बताओ तो तुम्हारा बाप कौन है।"

सरजू उर्फ हुक्कू जैसे मँझधार मे पड़ गया। उसका चेहरा और भी निर्बोध प्रतीत होने लगा। हुक्कू अभी सोच ही रहा था, कि रामचरित्र ने चील की तरह झपट्टा मार कर कहा—"इसका बाप कौन है ? मैं इसका बाप हूं।"

नशा अब इतना चढ़ चुका था कि रामचरित्र को समाज के श्रेणी विभाग का ख्याल भुला गया था। अब उसकी आँखों में पान्डेय और हुक्कू दोनों में कोई प्रभेद नहीं था।

तारा को बहुत आनन्द आ रहा था, वह मुस्कराई, फिर बोली—"छीः अच्छे लड़के ऐसी बात नहीं कहते। तुमसे वह उम्र में ज्यादा है, फिर तुम 'उसके बाप कैसे हो सकते हो'···कहकर तारा ने चेहरे को रूखा बना लिया।

यह युक्ति शायद रामचरित्र को पसन्द आई, और वह मिनट में दो सौ मील की रफ्तार से सोचने लगा। एकाएक उसका सिकुड़ा हुआ माथा मानो रोशनी से उद्भासित हो गया, बोला—"तो यह मेरा बाप है।"

तारा ने कृत्रिम क्रोध के साथ कहा—"यह भी नहीं हो सकता, तुम लोग कोई किसी के बाप नहीं हो।"

इसके बाद तारा के मन मे जाने क्या बात आयी। उसने रामचरित्र को फाँसी की सज़ा सुनाने के लहजे में कहा—"तुम्हारा बाप नहीं है।"

एक क्षण के लिए रामचरित्र की ऐसी हालत हुई जैसे कोई वज्रपात हुआ हो। प्रतिवाद के स्वर मे वह कुछ कहने ही जा रहा था कि फिर वह जैसे प्रसंग भूल गया। वह चुप रहा। तारा ने तीनों को ध्यान से देखते हुए कहा—"आपस में झगड़ा करना अच्छा नहीं होता। फिर तुम लोग शरीफ आदमी हो, इस तरह झगड़ा अच्छा नहीं है। अब आपस मे मेल कर लो। क्यों राज़ी हो न ?"...कहकर उसने बारी-बारी से पहले रामचरित्र को, फिर हुक्कू को और फिर पान्डेय को देखा।

तीनों ने मौन रहकर ही स्वीकार किया कि हाँ वे गलती पर थे। तब तारा ने उनसे कहा—"अच्छा, अगर एक दूसरे की तरफ से हम दिल साफ कर चुके हों, तो तुम लोग एक दूसरे को चूम लो।"

किसी ने कुछ कहा तो नहीं, पर कोई अपनी जगह से हिला नहीं। तब तारा ने उनको डाँटते हुए कहा—"शर्म नहीं आती, एक तो कसूर करो और फिर बात न मानो ;

इस प्रकार डाँट खाकर तीनों अपनी-अपनी जगह से उठे, और एक दूसरे का मुँह चूमने लगे। सामने के मकान से अर्णव

ने जो यह देखा तो कन्हैयालाल से कहा—"ये जानवर है कि आदमी है।"

कन्हैयालाल ने कहा—"अभी देखा ही क्या है, अभी आगे देखिये क्या-क्या होता है।"

जब तीनों मित्र एक दूसरे को खूब चूम चुके, तो वे तारा की तरफ बढ़े। तारा को इस बात की शंका नहीं थी। उसने डॉट बतायी पर उन पर इसका कोई असर नहीं हुआ। वे सब लोग एक साथ तारा को चूमने के लिये दौड़ पड़े। तारा ने बहुतेरा अपना बचाव किया, पर वह उनके इस चुम्बन-उत्सव से बच नहीं सकी, वे तो पागल हो चुके थे। खानसामा बहुत तजुर्बेकार था। वह जानता था कि ऐसी-ही किसी बात में इन सारी बातों का अन्त होगा। वह होटल के अन्दर की तरफ के दरवाजे को भेड़कर बाहर चला गया। वह इस परिणति से खुश ही था, वह अपने को तारा से सौ बार अच्छा समझता था, पर जैसे तारा इन रईसों के साथ बराबर में कुर्सी पर बैठती थी, उनके दाम पर बढ़िया-से-बढ़िया खाना खाती थी, और पुरानी-से पुरानी शराब पीती थी, उल्टा हुकूमत करती थी, वह सब उसे असह्य था। जिस समय तारा इन लोगोंको बन्दर की तरह नचा रही थी, उस समय उसे बड़ा क्रोध आ रहा था। जब इन तीनों ने मिलकर तारा को गिरा लिया और उसके वस्त्र उतारने लगे, उस समय उसे खुशी ही हुई। जो जिस काम का है, उससे उसी काम को लेना चाहिये।

उधर अर्णव ने जब यह कॉड देखा, तो उसने शरमाकर अपना दरवाजा ही बन्द कर लिया। दोनों मित्र कुछ देर तक बात करते रहे।

: ३ :

अगले दिन नेमीचन्द और तारा मे बात हो रही थी। नेमीचंद भी तारा के प्रेमिकों मे था, अवश्य दूसरे प्रेमिकों की तरह वह उसे कुछ देता नहीं था। तारा को इस बात से दुःख रहता था, पर वह उस पर सम्पूर्ण रूप से निर्भर थी। यदि नेमीचन्द उसे इस होटल मे आने वाले लोगों के साथ मिलने न देता, तो उसके लिए बड़ी मुसीबत पैदा हो जाती। मन-ही-मन वह नेमीचन्द से घृणा करती थी, पर मुँह से प्रेम का स्वाँग भरना पड़ता था। नेमीचन्द भी उससे खुश नही था, क्योंकि इस प्रकार की जो अन्य स्त्रियाँ इस होटल मे आती थीं, उनसे नेमीचन्द एक कमीशन लेता था, पर तारा को न मालूम कब और क्यों मुँह के आवेश मे उसने मुफ्त मे ही इस होटल मे अपना काम करने की अनुमति दे चुका था। बात यह है—वह सचमुच कुछ दिनों तक तारा पर लट्टू था; पर अब वह पुरानी बात हो चुकी थी। यों तो वह अभी तक तारा से कभी-कभी प्रेमिक रूप मे मिलता था, पर ऐसा तो यह इस होटल मे आकर अपना पेशा चलाने वाली सभी स्त्रियों से मिलता था, वह मिलना तो कमीशन के अलावा होता था।

इस प्रकार भीतर ही भीतर दोनों के मन में एक दूसरे के विरुद्ध शिकायत रहने पर भी एक जगह पर वे एक थे। दोनों की दिलचस्पी इस बात मे थी कि यहाँ जो धनी आते है, उनको लूटा जाय। यद्यपि वे अब प्रेम मे एक नहीं थे, फिर भी वे इन लोगों की घृणा में एक थे। यह अजीब बात थी कि जिन लोगों से उनकी रोजी चलती थी, उन्हीं को वे समग्र मन से घृणा करते थे। इन रईसों को एक कम्युनिस्ट इनसे अधिक क्या घृणा करता?

नेमीचन्द को रात की सारी घटनाओं का, केवल उस कमरे की नहीं, सारे कमरों की सारी घटनाओ का पता था। पर उसने ऐसा मुँह बना लिया जैसे उसे कुछ मालूम ही नहीं, बोला—"कल कैसा रहा ? वही स्कूल चलाया न तुमने ?"

तारा हँस कर बोली—"हाँ, तीनों को खूब बनाया। एक दूसरे से गालियाँ दिलवाई। फिर मेल करवाया। हा हा हा हा कहकर वह हँसी।"

नेमीचन्द को सब मालूम था। फिर भी बोला—"जब तुम स्कूल चला रही थी तब मैंने एक बार झाँककर देखा था। हाँ, तो यह बताओ कि मेल कैसे करवाया ?"

मेल ऐसे करवाया कि उनको एक दूसरे का मुँह चुमवाया। हि हि हि हि !

नेमीचन्द को इसके बाद की सारी घटना मालूम थी, पर वह जानकर भी अनजान बनते हुए बोला—"यह समझ मे नहीं आता कि ये लोग तुम्हारे पास केवल शासित और तिरस्कृत होने के लिये क्यों आते हैं।"....कहकर फिर खुद ही उसकी व्याख्या सी करते हुए बोला—"बात यह है कि जीवन में वे सर्वत्र हकूमत ही हकूमत करते हैं। सब उनका हुक्म मानते है। पर मनुष्य में जैसे हुक्म देने की प्रवृत्ति होती है, उसी प्रकार से आज्ञा पालन की भी प्रवृत्ति होती है। उसकी परितृप्ति तुम्हारे ही पास आकर होती है। इसीलिये वे आते है।"

तारा ने इस पर अपने चेहरे को कड़ुवा बना लिया। कल रात की प्रेम लीला के कारण अब भी उसके सारे बदन मे दर्द था। जमीन पर पैर मुश्किल से डालते बनता था, और चलने मे तकलीफ होती थी, पर नेमीचन्द के सामने उसे यही ढोंग रचना था कि वे तीनों मित्र उसके मकतब मे शासित और तिरस्कृत होने

आते थे। वह कोई सती-साध्वी होने का दावा नहीं करती थी। नेमीचन्द के सामने तो यह दावा चल भी नहीं सकता था, और सच तो यह है कि इस दावे के विपरीत दावे पर ही उसकी जीविका निर्भर थी, क्योंकि रजिस्टर्ड न होने पर भी वह एक पेशेवर वेश्या थी। वह इस होटल मे आनेवाले अन्य लोगों से भी मिलती थी या मिलाई जाती थी, पर उन क्षेत्रों मे अथवा उन लोगों के संबंध में वह ऐसा दावा नहीं करती थी। पर प्रारम्भ से ही इन तीन मित्रों के संबंध मे ऐसा दावा करती आयी थी, और नेमीचन्द उसे मानता आया था, इस कारण उसे निबाहना था।

नेमीचन्द ने उसे केवल इस प्रकार की बातों के लिये बुलाया नहीं था। आज एक विशेष काम से उसने तारा को याद किया था। यों तो होटल मे शराब खूब चलती थी, पर नेमीचन्द को इसकी परमिट नहीं मिली थी। इसलिये उसे दिखावे के तौर पर ही सही, यह दिखाना पड़ता था कि वह दूसरी जगह से शराब मँगवाता है। इसमे जोखिम भी था और परेशानी भी थी। इसके अतिरिक्त सब से बड़ी बात यह थी कि पैसों का घाटा था। पुलिसवालों को भी खुश रखना पड़ता था। इस प्रकार से कई आफते थीं।

इस होटल में आने-जाने वालों मे ये ही तीन व्यक्ति सबसे अधिक प्रभावशाली थे, और नेमीचंद को पूर्ण विश्वास था कि यदि यह त्रिगुट उसकी मदद कर दे, तो उसका कार्य सफल हो जाय। वह स्वयं इन लोगों को अपनी आवश्यकता की बात कह नहीं सकता था। इसी कारण वह तारा की सहायता चाहता था। उसने तारा को अपनी इच्छा की बात बतायी। तारा ने कहा—"यह तो बाये हाथ का खेल है। आज ही करवा दूँगी। तुम निश्चिन्त रहो।"

नेमीचन्द गद्गद् हो गया और बोला—"बस, तुम्हारा ही भरोसा है, तुम्हारे ही भरोसे पर मैं होटल चला रहा हूँ"...कहकर

वह एकाएक उठा और उसने तारा को आलिंगनबद्ध कर लिया। कहना न होगा कि इस आलिंगन में कोई प्रेम, यहाँ तक कि कोई वासना भी नहीं थी। यह तो व्यापारी आलिंगन था।

तारा इसे भली-भाँति समझती थी। कुछ रुखाई के साथ बोली—"इधर मुँह से तो यह कह रहे हो, और उधर नयी-नयी लड़कियों को होटल में ला रहे हो।"

बात तो सच थी। विशेषकर दो हफ्तों से विमला नाम की एक लड़की इस होटल मे आ रही थी जिससे तारा को बहुत भय हो रहा था, क्योंकि वह तारा से बढ़कर सुन्दरी थी, केवल यही नहीं, कुछ पढ़ी-लिखी होने के कारण वह अपने मिलनेवालों को यह धारणा दिला सकती थी कि वह किसी कालेज की छात्री है, और आजकल लोग इसी बात को पसन्द करते है। प्रेम करना बुरा नही समझा जाता, पर वेश्यागमन बुरा समझा जाता है। इसी कारण ऐसी लड़कियों की माँग 'होटल डो ताज' मे बहुत थी। एक दक्ष व्यापारी की तरह नेमीचन्द इस बात को भली-भाँति समझता था, इसी कारण जब विमला उसके पास पहले पहल लायी गयी थी तो उसने उसे हाथों-हाथ ले लिया था, और शौकीन लोगों के साथ उसका परिचय करा दिया था। तारा को उससे भय हो रहा था। इसी कारण उसने ऐसा कहा।

नेमीचन्द समझ तो गया। मन-ही-मन उसे क्रोध आया कि यह कौन होती है होटल के मामलों मे कूदने वाली। पर इस समय तो उसे काम बनाना था। बोला—"तोबा-तोबा! किसने तुम्हारे कान भर दिये। यों तो तुम जानती ही हो कि एक साथ दो चार कमरों मे लड़कियों की माँग होती है, तो तुम अकेली जान हो, सब जगह तो जा नही सकती हो, इसलिये अन्य दो-तीन लड़कियाँ भी आती जाती रहती है। यह तो तुम जानती हो कि सबसे अच्छे असामी मैं तुम्हीं को देता हूँ" ..कहकर अपना रोब जमाने के

लिये यह भी बोला—"तुम्हें तो मालूम है कि दूसरी लड़कियों के साथ मेरा सम्बन्ध कैसा है। मैं उन सबसे कमीशन लेता हूँ।"

नेमीचन्द की यह बात तो सत्य थी, और मामला उस समय के लिये यहीं पर दब गया। यह तय हुआ कि तारा जैसे भी हो नेमीचन्द को परमिट दिलायेगी। तारा ने विमला वाली बात को अधिक छेड़ना उचित नहीं समझा। वह खुद भी विश्वास करना चाहती थी कि कोई खतरा नहीं है। भविष्य के विषय में वह सोचना नहीं चाहती थी, क्योंकि ऐसा करना बहुत ही दुखकर था। यद्यपि वह यथेष्ट कमा लेती थी, फिर भी कुछ विशेष बचता नहीं था।

: ४ :

जिस समय नेमीचन्द और तारा इस प्रकार बातचीत कर रहे थे, उसी समय अर्णव और कन्हैयालाल भी आपस मे बातें कर रहे थे। आज वे छुट्टी-सी मना रहे थे। छुट्टी का अर्थ यह कि आज वे कहीं बाहर नहीं गये थे और दफ्तर में बैठे-ही-बैठे कागजात देख रहे थे। अखबारों के लिये भी कुछ मसाला तैयार करना था। जिन-जिन गाँवों की जैसी-जैसी हालत उन्होंने देखी थी, उसके विषय मे किसान-सभा के प्रान्तीय मुखपत्र 'किसान' के लिये कुछ रिपोर्ट तैयार करनी थीं। अर्णव इस काम मे लगा हुआ था। कन्हैयालाल गृहस्थी के सारे काम-काज कर रहा था, साथ-ही-साथ अर्णव के प्रश्नों का उत्तर देता जा रहा था और दोनों मे सलाह भी होती जाती थी। दिन के तीन बजे अर्णव को सारे काम-काज से फुर्सत मिली। खाना खा चुकने के बाद उसने होटल की तरफ़ दृष्टि दौड़ायी।

कल जिस कमरे में तारा का स्कूल चल रहा था, और बाद को जिसमे अत्यन्त बीभत्स प्रेमलीला हुई, जिसमें समाज के तीन स्तम्भ एक साथ एक अबला पर गिरे, उसी के बगल के कमरे मे एक नये सज्जन टाइपराइटर पर कुछ टाइप करते हुए दिखायी पड़े। उस व्यक्ति की उम्र करीब ४० साल की थी। देखने मे बड़ा गम्भीर मालूम होता था। शायद किसी कम्पनी का एजेन्ट हो। ऐसा मालूम होता था कि सवेरे से वह टाइप कर रहा है; अविरल गति से टाइपराइटर चल रहा था। अर्णव को ऐसा मालूम पड़ा जैसे उसे इस टाइपराइटर को टिप-टिप टाप-टाप तथा लाइन बदलने का कर्र सुनाई पड़ रहा है, यद्यपि दिन के कोलाहल मे यह आवाज

सुन सकना सम्भव नहीं था। वह व्यक्ति न तो इधर ताकता था और न उधर। बीच-बीच में मेज़ पर रक्खे हुए कुछ काग़ज़ात को देखने के लिये कुछ देर तक रुकता था, और फिर मानो खोये हुए समय की पूर्ति करने के लिये पहले से अधिक तेज़ी से टाइप करता जाता था।

अर्णव ने उस व्यक्ति को ध्यान से देखा, और उसके मन में कल रात के दृश्य से जो घृणा या यों कहिये विश्व-विरक्ति पैदा हुई थी, वह इस व्यक्ति को देखने से बहुत कुछ शान्त हो गयी। उसने कन्हैयालाल से कहा—"इस होटल में बहुत-सी बुरी बातें होने पर भी मालूम होता है कि बाहर इसकी ख्याति अच्छी है, तभी तो ऐसे काम-काजी लोग भी यहाँ ठहरते हैं। देखो यह कितने परिश्रम से काम कर रहा है।"

कन्हैयालाल ने केवल छोटा-सा जी मात्र कहा, और बोला—"रात को क्या खाइयेगा?"

अर्णव अप्रसन्न होकर बोला—"खाना कहीं भागे थोड़े ही जाता है। अभी तो दोपहर का खाना पेट में जैसा का तैसा रक्खा हुआ है। कुछ चले फिरे तो हज़म हो। चलें ज़रा कार्यकर्त्ताओं से मिल आवें।"

वह व्यक्ति उसी तरह टाइप करता जा रहा था। एक खानसामा उसके लिए ट्रे में चाय और कुछ खाने की चीज़ें ले आया। उस व्यक्ति ने लायी हुई चीज़ों को कनखियों से देखा, एकबार जैसे उसके चेहरे पर कुछ चमक सी आ गयी। पर उसने फिर मन को काम की ओर लगाया और टाइपराइटर-टिप टिप टिप टाप चलने लगा। अर्णव बोला—"जब किसानों का राज्य हो जावेगा, तब उन्हें भी इसी प्रकार अपने काम के बीच में अच्छा खाना खाने का मौका मिलेगा। टाइप करना भी परिश्रम का काम है, पर हल

चलाने से उसका कोई मुक़ाबला नहीं हो सकता...इसी प्रकार वह भावुकता में आकर बहुतसी बातें कह गया।"

कन्हैयालाल ने आधी बातों को सुना, और आधी बातों को नहीं सुना। उसे कुछ और ही फिक्र लग रही थी। रात को दो आदमी के खाने लायक न चावल था न आटा। और वह अर्णव को इस बात के लिये परेशान करना नहीं चाहता था।

उस व्यक्ति ने थोड़ी ही देर में टाइप करना खतम कर दिया। फिर उसने उस कागज़ को टाइपराइटर से उतार कर पढ़ा, और फाउन्टेन पेन निकाल कर पता नहीं कुछ शुद्धियाँ कीं या नहीं, फिर उसमें दस्तखत किया, और उसे लिफाफे मे बन्द कर दिया। इसके बाद वह चाय पीने लगा। अर्णव उसे देख रहा था, और अपने स्वप्न मे बह रहा था, बोला—"यह आदमी तो बड़ा विवेकी मालूम होता है। न मालूम कब से टाइप कर रहा है। मेज़ पर लिफाफों का ढेर लगा हुआ है।"

कन्हैयालाल बीच में बोल पड़ा .."यह तो कुछ भी नहीं। दो बार यह लिफाफे पोस्ट करवा चुका है।"

..तब तो और भी प्रशंसा की बात है। जब क्रान्ति होगी, तब ऐसे लोगों की हम लोगों को भी ज़रूरत होगी, क्योंकि यह सब काम तो रहेगा ही।"

कन्हैयालाल ने केवल इतना ही कहा—"ये लोग तो जिसका शासन होता है उसके साथ रहेंगे ही। तभी तो इन्हें ढुलमुल यकीन मध्यवित्त वर्ग कहा गया है। आप इसे जितना आदर्शवादी समझ रहे हैं, यह शायद उतना आदर्शवादी नहीं है।" कहकर कन्हैया-लाल अपनी समस्या को सुलझाने के लिये उठकर चला गया। अर्णव अपने विचारों मे निमग्न रहा।

सोचते-सोचते न मालूम किस समय उसकी आँख लग गयी

और वह खाली फ़र्श पर लेट गया। जब उसकी आँख खुली तो रात हो चुकी थी। कन्हैयालाल अभी शायद लौटा नहीं था। वह बत्ती जलाने ही वाला था कि उसका ध्यान होटल की तरफ़ गया। जिस कमरे मे वह भला आदमी दिन भर टाइप कर रहा था, वहाँ की मेज़ पर टाइपराइटर और कागज़ात के बजाय खाने-पीने की चीज़ें और बोतलें रखी हुई थीं। अर्णव ने सोचा कि वह दोपहर वाला व्यक्ति चला गया होगा, पर ध्यान से देखा तो वही व्यक्ति था, पर वह जैसे बदला हुआ था। यद्यपि इस समय कोई रोकने वाला नही था, फिर भी अर्णव ने बत्ती नही जलायी।

वह व्यक्ति जैसे किसी की प्रतीक्षा कर रहा था और बेचैन होकर बार-बार घड़ी देख रहा था। अर्णव ने सोचा ठीक है, कोई कम्पनी का आदमी डिनर में आ रहा होगा और उसके लिए यह सारी तैयारियाँ है। शराब की बोतल उसे कुछ खटकी, पर उसने इस संबध मे भी सोच लिया कि जैसा आदमी होता है, उसका वैसा स्वागत किया जाता है। जहाँ डिनर का उद्देश्य कोई-न-कोई व्यापार संबंधी बातचीत को परिपक्व करना है, वहाँ इन बातों का ख्याल क्यों रक्खा जायेगा। वह व्यक्ति इस समय तक जैसे सम्पूर्ण रूप से धैर्य खो चुका था। वह उठा, उसने ब्वाय ब्वाय करके ज़ोर से आवाज दी, फिर उससे कुछ बाते कीं। ब्वाय घबड़ाया हुआ चला गया, और उसने कुर्सी पर बैठकर नाराज़गी की हालत मे ही खाना शुरू किया। उसके काँटा-चम्मच पकड़ने, चवाने तथा बार-बार बीच मे कुछ पीने से ही पता चलता था कि वह नाराज़ है। अर्णव ने सोचा ठीक तो है, नाराज़ होने की बात तो है। जब एक आदमी को एक टाइम दिया और वह उस टाइम पर नहीं आता, तो नाराज़ होने की बात है।

वह व्यक्ति उसी प्रकार से खाता-पीता गया। अर्णव ने जो

उसे खाते देखा तो उसे भूख मालूम हुई, पर साथ-ही-साथ यह याद आ गया कि अभी कन्हैयालाल लौटा नहीं है। वह लौटेगा, तब कहीं खाना पकेगा, फिर मिलेगा। उसने भूख को भुला देने की चेष्टा की और उस व्यक्ति की तरफ से मुँह फेर लिया। होटल के दूसरे कमरों की तरफ देखने लगा, कल जिस कमरे में रामचरित्र तथा उसके साथी खा-पी रहे थे, आज वह कमरा अभी तक खाली था, रामचरित्र यहाँ रोज़ थोड़े ही आता होगा। उसे लीडरी से इतनी फ़ुर्सत कहाँ है? पर कमरे की सजावट से ऐसा मालूम होता था कि किसी के आने की तैयारी तो है। पर ऐसा तो शायद हर कमरे मे रहता होगा। न मालूम कब कौन आ जाय। बाकी कमरों मे सबमें चहल-पहल थी और लोग खा-पी रहे थे। कुछ लोग मुख्यतः पी रहे थे, खा नहीं रहे थे, या केवल पीने को अधिक दिलचस्प बनाने के लिये कुछ खा रहे थे। अर्णव को बड़ी हँसी आयी। यह अजीब दुनिया है। वह तो किसानों की दुनिया स परिचित था। वहाँ तो सूखी रोटी के भी लाले पड़े रहते है। इसी को न कहते है कि दूध-घी की नदियाँ बहती हैं। सचमुच ऐसी नदी कहीं थोड़े ही बहती है। इन सब बातों को सोचकर वह दुःखी हो गया। इतने में पीछे से किसी ने उसकी पीठ पर हाथ रख दिया।

कन्हैयालाल था, और कौन हो सकता था। हँसकर बोला— "कल तो बहुत तिनक रहे थे, और आज तो खुद ही बत्ती बुझाकर तमाशा देख रहे है।"

अर्णव ने होटल की तरफ आँख दौड़ाकर कहा—"कहीं कोई तमाशा तो नहीं हो रहा है।"

कन्हैयालाल बोला—"हो तो नही रहा है, पर होगा। अब आप यह खाना तो खाइये। यह तो चलता रहेगा।"

कहकर उसने एक पोटली-सी निकाली और उसमे से खाने-पीने की बहुत-सी चीजें निकाली, फिर व्याख्या करते हुए बोला—"सब उसी सरजू से लाया हूँ।"

अर्णव को याद पड़ा जैसे सरजू का नाम उसने कहीं सुना है, पर कहाँ सुना है, कैसे सुना है यह कुछ याद नहीं पड़ा। भूखा तो वह था ही, उसने फौरन खाना शुरू किया।

कन्हैयालाल ने कहा—"मैं तब से होटल में ही था। वहाँ से मै यह भी देख चुका था कि आप सो रहे है।"

"हाँ, ज़रा नींद आ गयी थी।" कहकर अर्णव ने जैसे कुछ सोचा, फिर बोला,—"तुम वहाँ क्या कर रहे थे?"

"जब से हम इस मुहल्ले मे आये है, तब से मुझे जब भी फ़ुर्सत मिलती है, होटल मे जाता हूँ। मैं तो कहता हूँ कि आप लोग फजूल के लिये समाजवाद धो खाते है, यदि किसी को उच्च वर्ग से घृणा करना सीखना है, तो वह इन होटलों मे जावे। मैं तो समझता हूँ कि यदि वर्तमान युग मे कोई एक संस्था इन शोषकों की सभ्यता को मूर्त करने में समर्थ हुई है, तो वे है ये होटल।"

अर्णव को सैद्धान्तिक बहस की गन्ध आ गयी, तो वह एक-दम चौकन्ना हो गया। खाना जारी रखते हुए बोला—"पर यह होटल बनाये किसी और कारण से गये थे। आज भी साधारण भोले-भाले लोग उनका उसी रूप मे उपयोग करते है; पर जैसा कि मैं देख रहा हूँ ये होटल व्यभिचार और शराब के अड्डे है। शायद अदूर भविष्य मे वेश्याओं का कोठे पर बैठना बिल्कुल उसी तरह से अप्रचलित हो जाय जैसे हाथ से कपड़ा सीना है। तब शायद यह सारा व्यवसाय होटलों के ही ज़रिये से हो।"

अर्णव जब इतना कह चुका, तब उसने पहली बार यह ख्याल किया कि कन्हैयालाल खा नहीं रहा है। उसने खाने की तरफ देखा

तो केवल दो रोटियाँ और कुछ तरकारी थी। वह अपना वक्तव्य भूल गया, और घबड़ाकर बोला—"तुम खा नही रहे हो, और मैं सब चट कर गया।" यदि अच्छी रोशनी होती तो देखा जा सकता था कि अर्णव के चेहरे पर आतंक और लज्जा का अद्भुत सम्मिश्रण था। बोला—"बातों-बातों मे मैं सब भूल गया।"

पर कन्हैयालाल ने जैसे उसकी बात सुनी ही नहीं। थोड़ी देर मे जैसे वह कही सुदूर से बोल रहा हो, बोला—"मै खाकर आया हूँ, उधर तो देखिये। आप जिन्हे दोपहर के समय बांस पर चढ़ाकर हाथ मे लालटेन देकर क्राति का अग्रदूत बनाना चाहते थे, वे क्या कर रहे हैं।"

अर्णव ने उस तरफ देखा ही नहीं था। अब जो उसने उस तरफ निगाह दौड़ायी, तो देखा कि वह व्यक्ति अब भी खा रहा है, और उसके सामने की कुर्सी पर तारा बैठी हुई है। तारा ने भी आते ही खाना-पीना शुरू किया था। दोनों मे बातचीत हो रही थी, और तारा तो खूब हँस रही थी। अर्णव की यह समझ में नहीं आया कि ये लोग क्या बात कर रहे होंगे। सम्बन्ध तो बिल्कुल स्पष्ट था, एक रूप को बेच रही थी, और दूसरा उसे खरीद रहा था। क्या ऐसी अवस्था मे दुकानदारी के ढग की बातचीत के अलावा कोई बातचीत संभव थी? पर चेहरों से तो मालूम हो रहा था, जैसे वे दुकानदारी से कोसों दूर हों। अजीब बात थी।

कन्हैयालाल ने कहा—"मैं अभी होटल में गया था तो सारी बातों का पता ले आया। यह जो व्यक्ति बैठा है, यह लखनऊ की एक बीमा कम्पनी का प्रमुख एजेन्ट है। यह अक्सर इस होटल मे आकर उतरता है। अपने शहर मे तथा अपने परिवार मे यह बहुत सच्चरित्र व्यक्ति समझा जाता है, पर जब बाहर आता है, तो इस प्रकार की हरकतें करता है।

अर्णव बीच में कड़ुवेपन के साथ बोल उठा—"और यही उन लोगों की शराफत है। इससे तो मैं उन लोगों को अच्छा समझता हूँ जो खुलेआम दुष्कर्म करते हैं।"

आध घण्टे तक बीमा कम्पनी का वह कर्मचारी और तारा हँस हँस कर बात करते रहे। इस बीच में मेज़ पर बहुत-सी चीज़ें आयीं और गयी। अन्त मे ब्वाय आकर मेज़ पर से सारा सामान उठा ले गया, केवल दो बोतलें और दो गिलासें रहीं। एक भरा हुआ पानी का जग भी रहा। बीमा कम्पनी का वह एजेंट तथा तारा, इस समय दोनों सिगरेट पी रहे थे, और एक दूसरे को अजीब दृष्टि से देख रहे थे। ब्वाय सलाम कर चला गया। वे दोनों एक दूसरे को अभी तक घूर रहे थे। तारा तो बीच-बीच में आँखें नीची कर लेती थी, पर उस व्यक्ति की दृष्टि में आक्रमणात्मकता बढ़ती जा रही थी। पर वह अभी सिगरेट पर सिगरेट पीता जा रहा था। बातचीत बिल्कुल बन्द हो गयी थी। वातावरण किसी सभावना से पूर्ण हो रहा था। अभी-अभी थोड़ी देर पहले जो तारा इतनी हँस रही थी, वह अब हँस नहीं रही थी। बीच-बीच में जैसे वह सिहर उठती थी।

इतने मे अर्णव और कन्हैया ने देखा कि बगल के उस कमरे मे कल का वही रामचरित्र वाला गुट पहुँच गया। बाकायदा उसी प्रकार खाने-पीने की चीज़ें तथा शराब आदि आयी। अर्णव ने कहा—"तारा तो इधर है, अब क्या होगा ?"

"एक तारा पर थोड़े ही निर्भर है। और भी कई होंगी।"
दोनों मित्र प्रतीक्षा करने लगे।

: ५ :

नेमीचन्द ने पहले ही रामचरित्र के यहाॅ से खबर ली थी। वह तो घर पर था नही। तब हुक्कू के यहाँ टेलीफोन किया था, उसने कहा था, ..आज तो आ नहीं सकता।

नेमीचन्द ने टेलीफोन पर कहा था, . आज हमारे यहाॅ हिरन का गोश्त आया है, इसलिये आप को पूछ रहा था।

हिरन का गोश्त तो सचमुच आया था। पर पहले से पूछ लेने मे नेमीचन्द की मन्शा यह थी कि तारा को कहीं और भेजा जाय या नहीं। यह गुट तारा को पसन्द करता था। इस तरह से अच्छी तरह मालूम करके तभी नेमीचन्द ने तारा को बीमा कंपनी के उस एजेन्ट के पास भेजा था। अब जो एकाएक रामचरित्र तथा उसके साथी आ गये, तो नेमीचन्द के होश उड़ गये। उसने उस ब्वाय को बुलाया, जो बीमा के एजेन्ट के कमरे में सर्व कर रहा था। प्रश्न के उत्तर में नेमीचन्द को मालूम हुआ कि सर्विस खतम हो चुकी है, और अब शायद उन लोगों ने दरवाजा बन्द कर लिया हो। यों तो वह रामचरित्र तथा हुक्कू साहब को यह कह सकता था कि तारा बीमार है पर उसे तो एक परमिट लेनी थी। तारा को सारी बात समझाई जा चुकी थी। एक बार उसके मन मे आया कि क्यों न उस नयी सुन्दरी, मनोरमा को ही सारी बात समझा कर इन लोगों के पास भेजा जाय। पर नहीं, इससे मनोरमा सिर चढ़ जायेगी। तारा के मामले मे जलकर, कम से कम वह ऐसा ही समझता था, वह अब मनोरमा ऐसी लड़कियों को भी फूॅक फूॅक कर पीने का आदी हो गया था। नहीं, यह नहीं हो सकता। तारा को ही किसी प्रकार निकालना चाहिये। बीमा के एजेन्ट के लिये

जसी तारा है वैसी मनोरमा, बल्कि शायद वह मनोरमा को अधिक पसन्द करे।

नेमीचन्द अपने कमरे से उठा, और एक ब्वाय से कुछ बोला। फिर वह बोमा के एन्जेट के दरवाजे के पास आकर खड़ा हो गया। दरवाजे से कान लगाया तो कुछ सुनायी नहीं पड़ा। उसके मुँह से शायद कोई गाली निकली, फिर उसने सिर खुजलाया, और जैसे एकाएक किसी निर्णय पर पहुँचकर उसने दरवाज़े पर दो तीन दफे उँगलियों से खटखट किया। पर उधर से कोई आवाज़ नहीं आयी। एक बार फिर वह सन्नाटे में आ गया, कुछ हिचकिचाया, दरवाज़े को ध्यान से देखा और फिर उसी प्रकार दोबारा खटखट किया। भीतर से शायद आवाज़ आई—"आओ।"

नेमीचन्द ने दरवाजे को खोला, और उसमें प्रवेश करते हुए नम्रता और दुःख की मूर्ति बनकर हे हे हे हे के सुर में बोला—"माफ कीजियेगा मैंने आप को डिस्टर्ब किया, पर एक बहुत बड़ी दुर्घटना हो गयी। इसी कारण आपको कष्ट देना पड़ा" कहकर उसने तारा की तरफ देखा और ऐसी सफाई से उसे आँख मारी कि बीमा का एजेन्ट नहीं देख पाया! फिर बोला—"तारा तुम्हारी माँ एकाएक बहुत बीमार हो गयी। शायद अन्तिम मुहूर्त्त है" कहकर उसने फिर आँख मारी।

तारा अपनी कुर्सी से एकाएक उठी और विह्वलसी बनकर बाहर निकल गयी। उसकी माँ तो दस साल पहले ही मर चुकी थी, इसलिए वह समझ गई थी कि नेमीचन्द की कोई चाल होगी। एक बार उसे याद आया कि शायद बीमा का एजेन्ट कोई भगा हुआ डाकू वगैरह हो, और पुलिस उसे गिरफ्तार करने आ गयी हो, इसी कारण नेमीचन्द ने यह ढोंग रचा हो। वह बाहर निकल गई और सीधे नेमीचन्द जिस कमरे में बैठा करता था, वहाँ पहुँची।

इधर नेमीचन्द उस व्यक्ति से कह रहा था—"हें हे हे हे, मैंने

आप को बड़ा डिस्टर्ब किया। पर कोई बात नहीं, मैं मनोरमा को आपके पास भेज देता हूँ। तारा से उसकी उम्र भी कम है, रंग गोरा है, और वह उसी प्रकार पढ़ी लिखी भी है। बिल्कुल आपके लायक है। हे हे हे हे।" उसने तारा के गुणों को ऐसे गिनाया जैसे बैल बेचने वाला बैल के दाँत आदि का विवरण देता है।

बीमा के उस एजेन्ट को नशा, सब तरह का नशा खूब चढ़ चुका था, और वह अब अन्तिम कार्य के लिये तैयार ही था कि नेमीचन्द ने आकर रसभग किया। पर वह कुछ कह भी नहीं सकता था। माँ बीमार है, इस पर वह कैसे तारा को रोकता। मनोरमा का नाम सुनकर वह कुछ आश्वस्त हुआ, पर अपने वर्ग के ढोंगीपन के अनुसार बोला—"नहीं, नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं है, मै तो यों ही उससे बात कर रहा था" मानो तारा को उसने रुपये देकर केवल बात करने के लिये ही बुलाया हो। ऐसा अजीब यह ढोंग था। नेमीचन्द को सभी कुछ मालूम था, फिर भी उसके सामने इस प्रकार बनना यही शराफत थी।

नेमीचन्द कुछ कह भी नहीं पाया कि मनोरमा आकर कमरे मे पहुँच गयी। ब्वाय जाकर उसे बुला लाया था। नेमीचन्द ने जो उसे देखा तो वह फिर से बोला—"जी। हे हे हें हें, जी। आपको मैंने बड़ा डिस्टर्ब किया. यह मनोरमा आ गयी। आप इससे बात कीजिये। माफी चाहता हूँ।" कहकर वह बीमा के एजेन्ट को कुछ उत्तर देने का मौका न देकर ही बाहर निकल गया। जाते समय वह दरवाजा भेड़ता गया। करीब-करीब साथ-ही-साथ पीछे से दरवाजे पर कुंडी चढ़ गई। नेमीचन्द हँसा।

उस मकान से अर्णव और कन्हैयालाल ने भी देखा कि बीमा के एजेन्ट ने नेमीचन्द के निकलते ही कुंडी चढ़ा दी, और बिना कुछ कहे सुने उसने मनोरमा को पकड़ लिया, और उसे बगल मे बिछी हुई पलंग पर करीब-करीब बेरहमी से दे मारा।

: ६ :

तारा ने नेमीचन्द से कहा—"मेरी माँ तो बहुत दिन की मर गयी। कहीं तुम्हारी माँ तो नहीं मरी। बात क्या है?" कहकर उसने प्रश्नसूचक दृष्टि से नेमीचन्द को देखा।

नेमीचन्द इस समय यह समझ रहा था कि उसने बड़ा भारी पुरुषार्थ किया और वह मन ही मन बहुत खुश था कि सांप भी मरा और लाठी भी नहीं टूटी। साले ने कैसे जल्दी कुंडी चढ़ाई। ऐसी ही चालाकियों से होटल चलता है। हा हा हा हा! खूब बनाया। माँ मर रही है, कैसी सूझ थी। बोला—"मेरी जान तुम तो यही समझती हो कि हर बात मतलब से होती है। बस तबीयत आ गई, सो बुला लिया।"

तारा बोली—"जाने भी दो। मैं कभी नही मान सकती कि तुमने बिना कारण मुझे बुलाया है।"

"हाँ, हाँ, यह तो है ही, जो कार्य होगा, उसमे कारण तो होगा ही। किस्सा कोताह यह है कि वह साला रामचरित्र आ मरा। वे ही तीन यार। अब उन्होंने आते ही तुम्हारी फरमाइश की। अब मैं करता तो क्या करता। इसी तरक़ीब से तुम्हे निकाल लाया। कहो कैसी रही? कैसे कह दिया कि माँ मर रही है।"

तारा अब समझी। बोली—"अच्छा"।

"हाँ तो तुम जाओ, और वह काग़ज़ भी लेते जाओ, कह कर उसने दराज़ मे से एक काग़ज़ निकाला, और उसे तारा के सुपुर्द किया। तारा इस काग़ज़ के बारे मे सारी बातें जानती थी। उसने उस काग़ज़ को रख लिया और फिर प्रसाधन-कक्ष में जाकर नये सिरे से प्रसाधन कर साड़ी बदलकर रामचरित्र आदि जिस

कमरे मे बैठे थे वहाँ पहुँची । रास्ते मे वह कमरा पड़ता था, जिसमे वह अभी-अभी थोड़ी देर पहले बैठकर बीमा के एजेन्ट के साथ खा पी रही थी । दरवाज़ा बन्द था । उसने कौतूहलवश दरवाज़े के पास कान रक्खा तो उसमे धीरे धीरे कराहने की आवाज़ मालूम हो रही थी । उसे मालूम था कि मनोरमा उस कमरे मे भेजी गई है । एक क्षण के लिये उसका चेहरा एक हिंस्र पशुकी तरह हो गया, पर अगले कमरे मे ही उसे जाना था, उसने फौरन दुकानदारी की हँसी से अपने चेहरे को उद्भासित कर लिया और वह कमरे मे दाखिल हो गयी ।

सामने के मकान में अर्णव और कन्हैयालाल ने जो तारा को उस कमरे मे प्रवेश करते हुए देखा, तो उन्हे कोई विशेष आश्चर्य नहीं हुआ । मानो वे जानते ही हों कि ऐसा ही होगा । कन्हैयालाल ने केवल अर्थपूर्ण ढग से कहा ..देखा ?

अर्णव तो सब कुछ देख ही रहा था । उसने कहा देख रहा हूँ । यह तुमने अच्छा मकान लिया । मैं समझता कि किसान सभा के सब कार्यकर्त्ताओं को इन बातों को प्रत्यक्ष देखने का मौका देना चाहिये । इससे बढ़कर कोई शिक्षा नही हो सकती ।

दोनों मित्र इसी प्रकार से बातें करते रहे । यहाँ तक कि अर्णव खा पीकर हाथ धोना भी भूल गया । रामचरित्र के कमरे में कोई नई बात नहीं हुई । जैसा उस बार हुआ था, मोटे तौर पर उसी ढंग पर एक के बाद एक प्रक्रिया हुई । तारा से किसी कागज़ को लेकर हुक्कू ने पहले ही अपनी जेब मे रख लिया था । यद्यपि इसके बाद जो कुछ होता रहा, उसमें बदहवासी की मात्रा अधिक थी, फिर भी तारा को पूरा विश्वास था कि इस समय हुक्कू चाहे जो कुछ भी करे, जब वह सबेरे अपने घर पर उठेगा, तो सारा काम ठीक-ठीक करेगा । केवल तारा ही नहीं नेमीचन्द

भी इस बात को जानता था, इसी कारण उसने तारा को काग़ज़ दे देने के लिए कह दिया था।

जिस कमरे मे वह बीमा का एजेंट ठहरा हुआ था, उसकी बत्तियाँ बुझा दी गयीं थीं, और अब उसमे कुछ दिखाई नहीं पड़ता था। दूसरे कमरों मे खाना पीना चल रहा था। एक जगह ताश पर जूआ भी हो रहा था। होटल डी ताज मे जो अन्य काम होते थे, उनके अलावा जूआ भी होता था।

———

: ७ :

अनुशासन के कारण तारा ने उस समय तो नेमीचन्द की बात मान ली थी, पर अगले दिन जब वह सन्ध्या के कुछ पहले होटल मे आयी, तो वह नेमीचन्द से लड़ने लगी। बोली,—"तुमने वादा किया था, कि मनोरमा को इस होटल मे नही आने दोगे, और कल उसको मैंने अपनी आँख से देखा।"

नेमीचन्द कुछ इसी प्रकार की बात की आशा करता था; इसलिये वह पहले से ही तैयार था। उसने आँख से तारा को तौला, फिर बोला—"तुम तो नादान की तरह बात कर रही हो। मैंने तुमसे कह दिया कि एक साथ तुम हर कमरे मे हाजिर तो नही हो सकती। कल ही की घटना को लो। मनोरमा थी, तभी परिस्थिति संभली, नहीं तो कही वह बीमावाला बाबू अड़ जाता, तो नाहक को एक झगड़ा पैदा होता। और जानती हो झगड़े से शरीफ लोग कितना घबड़ाते है। कल से लोग मेरे होटल मे आना छोड़ देते। कहा भी है बद अच्छा बदनाम बुरा। बद होने से काम बनता है, पर बदनाम होने से बना बनाया काम भी बिगड़ जाता है।"

तारा पर इन बातों का कोई असर नहीं हुआ। उसके सामने तो मनोरमा का भूत था। झुंझला कर बोली—"मै यह थोड़े ही कहती हूँ कि मैं होटल का सारा काम और सारे ग्राहकों को सभाल लूँगी। मैं तो कहती हूँ कि पहले जो लड़कियाँ आती थी, उन्हे आने दो। पर इस मनोरमा को दूर करो।" कहकर एकाएक कुछ रुँआसी होकर बोली—"मैंने ही तुम्हे इस होटल को बनाने मे मदद दी, और अब तुम मुझे निकालने पर तुले हुए हो"..

कहकर उसने आँचल से आँखें पोंछी।

नेमीचन्द एकाएक अपनी कुर्सी से उठा और रुआँसी तारा को खड़े-खड़े ही आँशिक रूप से आलिंगन करता हुआ बोला—"कहाँ की बात कहाँ भिड़ाती हो। तुम्हें निकाल सके, ऐसी मजाल किसकी है? बात समझती तो हो नहीं, ख्वामख्वाह खुद परेशान होती हो और दूसरों को भी परेशानी मे डालती हो। ग्राहक लोग अब पहले की तरह नही रहे कि जो भी माल दो वही पसन्द। पहले इस इलाके मे यही एक होटल था जहाँ लोगों को सब चीज मिल सकती है। पर अब तो रोज नये-नये होटल खुल रहे है। जबर्दस्त होड़ मची हुई है। पहले ग्राहकों मे यह बात थी कि जिस होटल से लग गये, उसी के साथ सम्बन्ध रखते थे। पर अब तो जरा जरा सी बात पर लोग होटल छोड़कर चल देते है। अब वे अन्धे नही रहे। उन्हे रोज नया-नया माल चाहिये। फिर उधर मनोरमा बिना खाये मर रही थी। मैंने कहा जहाँ इतने लोगों के साथ भलाई कर रहा हूँ तहाँ उसके साथ भी करूँ। मेरे पल्ले से कुछ लेती तो है नही। उससे तो मै एक तिहाई कमीशन लेता हूँ। कहाँ तुम और कहाँ वह? कहाँ राजा भोज और कहाँ भुजवा तेली।' ...कहकर उसने उसे गुदगुदा दिया।

फिर भी तारा हँसी नहीं। उसे सचमुच अपने भविष्य के सम्बन्ध मे बहुत डर हो रहा था। यदि मनोरमा ऐसी लड़कियाँ इस होटल मे आने लगीं, तो इसमे सन्देह नही था कि उसके दिन गिने हुए हैं। अपने को नेमीचन्द के आलिंगन से मुक्त करती हुई बोली—"तुमने कहा था कि होटल मे मुझे साँझेदार बनाओगे, सो अब उसमे देरी क्या है? टालते-टालते तो चार साल हो गये।"

नेमीचन्द का चेहरा कड़ा पड़ गया। वह जाकर कुर्सी पर बैठ गया, बोला—"तुम साँझेदार तो हो ही। तुम से मैं कोई कमीशन

नहीं लेता जब कि बाकी सब लड़कियों से मैं पूरा कमीशन लेता हूँ। तुम्हारे लिये यह हुक्म है कि जब चाहे तब खाओ पीओ, और उसके लिये कोई बिल नहीं बनेगा, लफ्ज़ों के पीछे मत दौड़ा करो। ज़रा हिसाब लगाकर देखो कि कमीशन न देने से तुम्हें कितने रुपयों का फायदा रहता है। इसके अलावा तुम्हारे खाने-पीने का कोई खर्च नहीं है। मैंने तो तुमसे यह भी कह दिया कि होटल में ही आकर ऊपर के कोने वाले कमरे में रहो।"

तारा सिर नीचा करके सब बातें सुनती रही। उसने हिसाब लगाकर देखा कि सचमुच उसे बहुत फायदा है, फिर भी वह मनोरमा वाली बात से सन्धि न कर सकी।

नेमीचन्द ने समझा कि उसके तर्क काम कर रहे हैं, इस कारण वह बोलता गया—"तुम क्या समझती हो मुझे इस होटल से कुछ ज्यादा आमदनी है। मकान के किराये में, नौकरों, रसोइयों, खानसामों की तनख्वाह में करीब-करीब सारी रकम निकल जाती है। यहाँ पर आकर खाने वालों से हमें कुछ भी नहीं बैठता। यह तो कहो कि पीने की चीज़ें रखता हूँ, इससे कुछ पैसे बनते हैं, नहीं तो कहीं का नहीं रहता।

तारा बीच में बोल पड़ी..."पीने की चीज़ों में तो तुम्हें बहुत फायदा रहता होगा। एक तो यों ही मुनाफा, तिस पर तुम हर शराब में कम से कम उतना ही पानी मिलवाते हो।"

नेमीचन्द को यह प्रसंग बहुत नापसन्द आया। बात तो सच थी, पर इसका उल्लेख उसे पसन्द नहीं था। बोला—"जैसा सब करते हैं वैसा ही मैं करता हूं। फिर रात भर शराब सप्लाई करने के कारण पुलिसवालों को कितना देना पड़ता है।"

"पर जूआ भी तो चलता है।"

नेमीचन्द अबकी बार बिलकुल क्रुद्ध हो गया। बोला—"न

मालूम तुम्हारे दिमाग में कहाँ कहाँ से कूड़ा भर गया है। पहले तो तुम ऐसी नहीं थीं। जूआ चलता है तो उसमें मेरा क्या वश है। कोई कमरे का दरवाज़ा बन्द करके जूआ खेले तो हम कर ही क्या सकते हैं। यह होटल है, कोई मन्दिर तो है नहीं। लोग भिन्न-भिन्न कारणों से यहाँ ठहरते हैं। कोई व्यापार के कारण आता है, तो कोई परीक्षा देने या नौकरी खोजने आता है। हमें इससे क्या? हम तो रोज़ शाम को रजिस्टर पर सबका नाम चढ़ाकर के पुलिस के पास भेज देते है। कौन अपने कमरे मे जूआ खेल रहा है, कौन भजन कर रहा है, इससे हमें क्या मतलब?"

तारा समझ गई कि अब इस प्रसंग को यहीं पर दबा देना चाहिये क्योंकि नेमीचन्द नाराज़ हो चुका था। जब पानी में रहना ही है, और कोई चारा ही नहीं है, तो मगर से बैर करने से क्या फायदा। वह बोली—"तम जो चाहो सो करो, मैं कोई उपदेशिका नहीं हूं। मैं तो केवल यही कह रही थी कि कहीं दूध से मक्खी की तरह निकाली न जाऊँ।" ..कहकर वह फिर रुँआसी हो गई, और रूमाल से आँख पोंछने लगी।

नेमीचन्द का क्रोध शान्त हो गया, बोला—"लो फिर उसी बात पर आ गई। मैं कह चुका, हज़ार बार कह चुका कि तुम्हे यहाँ से निकालने वाला पैदा नहीं हुआ। होटल मैं कुल मिलाकर पचास आदमी काम करते होंगे, पर तुम जानती हो कि कभी कोई मामला अटकता है तो मै तुम्हीं से सलाह करता हूं, मेरी जो पत्नी है उसे तो मैं कभी कुछ बताता नहीं हूं, पर तुमसे सलाह लेता हूं।"

तारा इस बात पर मन ही मन खुश हुई कि पत्नी के साथ उसकी तुलना की गई और उसे अधिक विश्वासपात्री बताया गया। पर कृत्रिम रूप से मुँह फुलाकर बोली—"उनको तो तुम इसलिये नहीं बताते हो कि वह बेचारी इन मामलों को क्या जाने। तुमको तो वे बिलकुल दुधमुँहे समझती होंगी।"

...क्या समझती है यह तो वही जानती होगी । पर इतना तो साफ है कि वे यही समझती हैं कि होटल में सिर्फ खाना खिलाया जाता है। कालान्तर में अब होटल मनुष्य की सारी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली संस्था हो चुकी है, यह उन्हें नहीं पता ।

प्रसंग बदल गया। तारा ने आधो खुशामद और आधे व्यंग के स्वर में नेमीचन्द को उसकी स्त्री के सम्बन्ध मे पूछना शुरू किया । बोली—"तुम्हारे शराब पीने पर वे नाराज़ तो नही होतीं ।"

..."वे नाराज़ क्या होंगी, हमारे यहाँ यह समझा जाता है कि पुरुषों को यह सब करने का अधिकार है। हमारे श्वसुर साहब भी तो शराब पीते थे ।"

इसी ढंग पर कुछ देर तक बातें होती रहीं । अन्त मे नेमीचन्द ने अपनी तरफ से तारा से कहा—"मनोरमा से तुम बिल्कुल परेशान न होओ। ऐसी कितनी आती और जाती रहेगी । जहाँ इनका शरीर ज़रा ढला कि मैंने दूसरी बुलायी। तुम अपने साथ इनका मिलान क्यों करती हो? मैंने तो कह दिया कि ऊपर के कोने वाली कोठरी मे आकर जमो । उम्र तो सभी की ढलती है। मुझ ही को देखो, मैं कैसे छरहरे बदन का था, अब कितना मोटा हो गया हूं। पर तुम फ़िक्र न करो। फिर हम अपने कारोबार को और भी बढ़ाना चाहते है। कई योजनाये सामने हैं। तुम तो पढ़ी लिखी हो, ऐसा समझा जायेगा तो कही न कहीं तुम्हें खपा दिया जायेगा।

तारा यही आश्वासन चाहती थी। वह गद्गद हो गई, और उठकर नेमीचन्द से जाकर लिपट गई । नेमीचन्द ने भी उसे निविड़ आलिंगन मे आबद्ध कर लिया।

: ८ :

बीमा कम्पनी का वह एजेन्ट होटल मे चार या पॉच दिन रहकर चला गया। जितने दिनों तक रहा, उसका कार्य-क्रम वही रहा। सबेरे आठ बजे उठकर वह नाश्ता करके निकल जाता था, इसके बाद बारह बजे लौटता था और फिर अनवरत रूप से टाइप करता रहता था। पाँच बजे सारा काम काज खतम कर टाइपराइटर बन्द कर देता था। इसके बाद किसी दिन तो होटल मे ही बैठे-बैठे झपकी-सी लेकर समय काट देता था, और किसी दिन थोड़ी देर के लिये टहलने चला जाता था। सन्ध्या के फौरन बाद ही उसका वही कार्यक्रम शुरू होता था। सामने मेज़ पर खाना और बोतलें होती थीं, और फिर मनोरमा होती थी।

सामने के मकान से अर्णव और कन्हैयालाल ने दो ही दिनों तक यह लीला देख पायी। बाद को वे अपनी सभा के काम से गॉवों के दौरे पर चले गये। पर होटल मे जीवन उसी तरह चलता रहा। बीमा कम्पनी का एजेंट एक दिन सवेरे निकला तो तीन या चार बजे लौटा। वह बहुत से खिलौने, मिठाइयॉ तथा साड़ियॉ खरीद लाया था। ये चीज़ें सब अपने घर के लिये थीं। पहले ही से कहा हुआ था, इसलिये बिल आ गया, और उसने बिल चुकता कर दिया। अपने ब्वाय को बखशीश भी दे दिया। अभी पैकिंग पूरा नहीं हुआ था, खरीदी हुई चीज़ों मे से कुछ चीज़ें, खिलौने और साड़ियॉ अभी तक मेज़ पर दिखाई दे रही थीं।

इतने मे मनोरमा कमरे मे आई। पर उस व्यक्ति ने उसकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देखा। गत तीन चार रातों में जो

स्त्री सबसे निकट मालूम होती थी, जिसके एक एक अंग को उसने बार बार सराहा था, आज गृहयात्रा के इस पूर्व क्षण मे उसके साथ कोई सम्बन्ध ही नहीं मालूम हुआ। जैसे उसने मनोरमा को कभी देखा ही न हो। देखकर के भी नहीं देखा।

मनोरमा के लिये यह कोई बहुत आश्चर्यजनक बात नहीं थी। वह जानती थी कि उसके साथ इस व्यक्ति का सम्बन्ध क्रेता और विक्रेता का था। अब वह समाप्त हो चुका था। अवश्य कल अपनी रवानगी की खबर देते हुए इस व्यक्ति ने उससे वादा किया था कि वह जल्दी ही फिर इधर के दौरे मे आयेगा, पर ऐसे वादों का क्या मूल्य है? इन वादों से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था, यानी था तो बहुत थोड़ा। क्या पता तब तक क्या हो? वह तो केवल इस कारण आई थी कि चलते समय शायद उसे भी कुछ बख्शीश मिल जाय। अवश्य वह अपने मन मे बख्शीश शब्द को कभी नहीं लाती थी, पर शब्द चाहे कुछ भी हो, मतलब कुछ रुपये मिल जाने से है।

जहां यह टाइप था जो अपनी रात्रि की संगिनी को जाते समय पहचानने तक से इन्कार कर रहा था, वहा मनोरमा ने दूसरे टाइप के लोगों को भी देखा था, जो उसे स्टेशन तक जाने के लिये मजबूर करते रहे, और बिछुड़ते समय ऐसे मिले मानो उनका सम्बन्ध चिरन्तन हो। जाते समय वे दे भी बहुत कुछ जाते है। शायद उनका विवेक ऐसा कहता हो कि इस लड़की को मैंने खराब किया, क्षतिपूर्ति के रूप मे इसे जितना देते बने, दो। पर यह दूसरे टाइप के लोग शायद यह सोचते हों कि मैं अच्छा खासा गृहस्थ हूँ, प्यार करने वाला पति तथा स्नेहमय पिता हूँ, इस दुष्टा ने मुझे भ्रष्ट किया। अवश्य सत्य कुछ और ही होता है।

जो कुछ भी हो प्रथम दृष्टि मे ही निराश होने पर भी मनोरमा एक कोने में खड़ी रही। फिर वह मेज़ की तरफ बढ़ी, और सामने

रक्खी हुई साड़ियों को उठाने लगी। योंही प्रशंसा की दृष्टि से, बिना किसी लोभ के। वह जानती थी कि वे साड़ियां उसके लिये नहीं है। उसकी तो मजदूरी पाई पाई चुका दी गई। हाँ मजदूरी शब्द का कितना दुरुपयोग है!

वह अभी साड़ी उठा भी नहीं पाई थी कि उधर से वह व्यक्ति बिजली की तरह झपटा, और वज्र की तरह कठिन मुष्टि से उन साड़ियों को वहां से उठा लिया, मानो उसके स्पर्श से वे साड़िया अपवित्र हो जायेंगी। अजीब बात थी, वह अपने को तो पवित्र समझता था, पर मनोरमा को पाप की प्रतिमूर्ति समझ रहा था। वह यह नहीं कह सकता था कि उसने केवल इस स्त्री से ही सम्बन्ध किया। वह तो जिस नगर मे भी जाता था, वहीं ऐसी स्त्रियो से सम्बन्ध करता था। अतएव उस दृष्टि से भी वह उस स्त्री से कुछ श्रेष्ठ नहीं था। हॉ, एक बात थी कि वह रुपया देता था, और ये लोग लेती थीं। इस नाते ही शायद वह अपने को इन स्त्रियों से श्रेष्ठ समझता था। इसी कारण उसने साड़ियों को झपटकर उठा लिया। बोला..."किस लिये आयी हो?" ..उत्तर की प्रतीक्षा बिना किये ही विशेष कटु लहजे मे बोला "शायद कुछ बखशीश लेने आयी हो। आजकल हर बात में बखशीश मांगने का तरीका चल पड़ा है।"

मनोरमा इन बातों की मार से सहम गई पर उसकी परिस्थिति ऐसी हो चुकी थी कि अब पीछे हटने का रास्ता नहीं था। उसे तो अन्त तक कड़वे घूंट को पीना ही था। बोली..."नहीं तो, बखशीश के लिये नहीं आई हूँ, योंही आपसे मिलने के लिये चली आई।...कहने को तो उसने कह दिया, पर अपने ही कानों को उसकी बात कुछ अच्छी नहीं लगी। उसने सिर नीचा कर लिया।"

उस व्यक्ति ने साड़ियों को बक्स में बन्द करते हुए कहा...

"मिलने आई हो, पर मैं तो स्त्रियों से एक ही तरीके से मिलता हूँ..." कहकर वह मेज़ पर की अन्य चीज़ों को समेटने लगा। कलाई घड़ी की तरफ जल्दी से देखा, फिर बोला "अब समय नहीं रहा, नहीं तो मैं तुमसे मिलता। अफसोस। फिर कभी" सचमुच उसके लहज़े में अफ़सोस झलकता था। अभी दो ही मिनट पहले उसमे घर लौटने के लिये जो जोश था, वह जैसे एक क्षण के लिये स्तिमित हो गया। उसकी स्त्री करीब करीब बुढ़िया हो चुकी थी, पर उसमे स्त्रीत्व क्या रह गया था। छाती लटक आई थी, मुंह मे हमेशा पान भरा रहता था, पता नहीं प्रसाधन का कोई द्रव्य कभी इस्तेमाल करती भी थी, या नहीं, और जब करती थी तो गलत तरीके से करती थी। उस प्रसाधन को देखकर मुग्ध होने के बजाय हास्य का उद्रेक होता था। तभी तो वह हमेशा दौरे पर ही रहता था। पर यह सब होते हुए भी वह अपनी स्त्री के प्रति कृतज्ञ था, और बच्चे ? उनकी बात स्मरण होते ही उसका हृदय स्नेह के रस से आप्लुत हो जाता था।

उसने सोचा ये दो दुनिया अलग अलग हैं। सब पैकिंग खतम हो चुका था। एक बार उसने मनोरमा की तरफ देखा, और एका-एक जेब से एक पांच रुपये का नोट निकाल कर उसे दे मारा। फिर वह बिना कुछ कहे सुने कमरे से बाहर निकल गया। जैसे कहीं कहीं यह रिवाज है कि मुर्दे को फूंक कर श्मशानघाट से चलते समय पीछे मुड़कर नहीं देखते, उसी प्रकार वह व्यक्ति सीधा होटल से निकलकर टैक्सी पर जाकर बैठ गया। होटल के नौकरों ने उसका सामान टैक्सी मे रख दिया। गाड़ी भर्र से रवाना हो गयी। उस व्यक्ति ने गहरी सांस ली, मानो एक अध्याय का अन्त हो गया।

मनोरमा वह नोट उठाकर उस कमरे से चली। उसे फ़िक्र यह हो रही थी कि आज रात को पता नहीं, कोई मिलेगा या नहीं।

उसका मन विषाद से भरा हुआ था। यह विषाद उसी प्रकार का था जैसा नौकरी छूटने पर होता है। वह नेमीचन्द के कमरे में गयी। नेमीचन्द मानो उसी के लिये उत्सुक बैठा था। बोला... "आओ, आओ। बिदा कर आयी ?"

वह समझ गई, कि इस प्रश्न का आशय क्या है। एक बार उसका चेहरा फक पड़ गया, फिर अप्रसन्न होकर बोली हाँ, बिदा कर आयी। आदमी बड़ा खूसट था।

नेमीचंन्द समझ गया कि खूसट शब्द का क्या आशय है। उसे तो पहले ही पता लग चुका था कि उस व्यक्ति ने जाते समय एक पांच रुपये का नोट दिया था, इस कारण वह हिसाब लगाकर बैठा था उसे कमीशन का एक रुपया दस आना आठ पाई मिलेगा। पर यह तो उसे झांसा देने पर तुली हुई थी। बोला "मेरा पुराना ग्राहक है। मैं इसे खूब जानता हूँ। अपनी कौड़ी किसे प्यारी नहीं होती, पर एक एक पाई चुकता करने वाला आदमी है। कभी कोई बात लिखने से रह भी गई तो अपनी नोटबुक से देखकर उसका पैसा देने वाला आदमी है।"

मनोरमा ने संक्षिप्त रूप से इसका उत्तर दिया..."हाँ," .. फिर बोली "ज़माना ही ऐसा है कि पहले के बडे बड़े उदार लोग अब कौड़ी कौड़ी को दांत से पकड़ते हैं।"

नेमीचन्द बहुत अप्रसन्न हुआ, इस कमीशन के झगड़े में हमेशा ऐसी परिस्थितियों का सामना होता था। रेट तो बंधे हुए थे, पर उसे अच्छी तरह मालूम था कि ये लड़कियाँ ग्राहकों से रेट से अधिक बहुत कुछ ले लेती हैं, पर कभी उन हिसाबों का पता नहीं लगता। इसलिये वह हेडवेटर खूबचन्द को खुफिया के रूप मे रखता था। पर कमरे के अन्दर विशेषकर रात के समय क्या लेनदेन हो रही है, उसका उसे क्या पता लग सकता था ? इस कारण नेमीचन्द बहुत दुःखी रहता था। उसे बड़ा क्रोध आता था कि

लोग ईमानदारी से काम क्यों नहीं करते। वेटर चोर है, रसोइये चोर हैं, जुआरी ठीक से नहीं बताते कि क्या हारा और क्या जीता, इन लड़कियों की भी यही हालत है। कभी किसी से पूछ बैठता "क्यों कुछ इनाम इकराम मिला ?"

तो इसके उत्तर मे न मालूम इन लोगो ने षड्यंत्र कर लिया था या क्या कर लिया था, वे यही कहती थीं "अजी आजकल इनाम इकराम कौन देता है ? रेट के पैसे रखवा लिये यही बहुत है। हाँ ऊपर से जो खाया पीया, वह बात दूसरी है ?"

मनोरमा अभी तय नहीं कर पायी थी कि इन पांच रुपयों को बिना कमीशन दिये हड़प जाय या नहीं। पता नहीं किसी ने देख ही लिया हो क्योंकि, उस व्यक्ति ने जिस तरीके से नोट दे मारा, वह तो बहुत खुला हुआ मामला था। वह परिस्थिति को ताड़ रही थी। दोनों एक दूसरे को आँखों से तौल रहे थे।

कुछ सोचकर मनोरमा ने पाच रुपये के नोट निकालकर नेमीचन्द के सामने रखते हुए कहा...मैं तो भूल रही थी, यह जाते वक्त देता गया।

नेमीचन्द को तो सब कुछ मालूम था, फिर भी उसने बनते हुए कहा "कौन दे गया ?..." पर उत्तर की प्रतीक्षा बिना किये ही उसने नोट लेकर काउन्टर मे रख लिया, और तीन रुपये छः आने उसे लौटा दिये। आठ पाई उसके और बनते थे, पर उसने उसे छोड़ दिया और समझा कि बहुत उदारता कर रहा है। वह मन ही मन मनोरमा पर बहुत प्रसन्न हुआ, बोला..."काम बहुत बढ़ रहा है। अब तुम इधर उधर न जाया करो, न मालूम कब कौन बुला बैठे " कहकर उसने सूक्ष्म रूप से आँख मारी।

"...मैं भी तो यही चाहती हूँ, इधर उधर का जाना अच्छा नहीं लगता। फिर होटल मे मैं सुरक्षित रहती हूँ, जब कि दूसरों के

घरो मे जाने में तो पता नहीं लगता कि लौट भी पावे या नहीं। ...मनोरमा ने गद्गद् होकर कहा।

"हाँ,आजकल लोगो मे बेईमानी बहुत हो रही है। मैं तो यही समझता हूँ कि जितनी लड़कियाँ हमारे यहाँ आती हैं, वे बिल्कुल सुरक्षित हैं।

इतने मे कोई बाहरी व्यक्ति आया, और मनोरमा उठकर चली गई। यद्यपि उसने नेमीचन्द से बड़े प्रेम से बातचीत की थी, पर उसके मन मे वह एक रुपया दस आना खोने का दुःख कांटे की तरह खटक रहा था।

: ९ :

दो तीन दिन बाद। तारा ने चाय की चुस्कियाँ लेते हुए नेमीचन्द से कहा—"तुमने तो मुझ से कहा था कि ऊपर का कोने वाला कमरा मेरे लिये है, और जब चाहे तब मैं उसमे आ सकती हूँ। आज टहलते-टहलते मैं ऊपर गई तो देखा कि उस कमरे में तो कुछ और लोग डटे हुए है। क्या उसमें भी क्लायंट आने लगे?"—उसने नेमीचन्द को प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

नेमीचन्द माफी-सा माँगते हुए बोला—"अरे कुछ ऐसी ही परिस्थिति हो गयी कि उस कमरे को देना पड़ा। तुम जानती हो कि वह कमरा कोई बहुत अच्छा नहीं है .

बीच में बात काटती हुई तारा बोली--"मैं जानती हूँ, तभी तो वह मुझे दिया गया था।"

नेमीचन्द बिना सहमे हुए बोला—"मैं उस दृष्टि से अच्छा बुरा नहीं कह रहा हूँ। यों तो वह कमरा सब कमरों की तरह है, पर उसमें जरा पर्दा है। रहने के लिये तो वही अच्छा है, पर गाहकों की दृष्टि से वह अच्छा नहीं है।"

"अच्छा तो कौन आ गया उसमें?"

...हाँ उसमें एक जोड़ी आई है। योंतो देखने मे पति-पत्नी मालूम होते है, और लिखाया भी उन्होंने यही है, पर कुछ दाल मे काला अवश्य है। खैर हमें क्या करना है? हमने तो पुलिस में लिखा दिया जैसा सबका लिखा देते हैं। उन्होंने इसी कमरे को पसन्द किया। मैं यह कमरा तुम्हें दे चुका था, इसलिये मैंने कहा इस कमरें का किराया ज्यादा है। मेरा उद्देश्य यह था कि वे उसे न

ले, पर वे अधिक किराया देने पर ही राजी हो गये। तब मैं क्या करता, मैंने दे दिया।

..."अच्छा मैं समझ गयी। मैं अभी आ भी नहीं रही हूँ।"

.. "आओ भी तो क्या है?".किसी भी कमरे मे रहो...फिर कुछ हलकेपन से बोला—"तुम्हारे लिए तो जान हाजिर है, यह क्या छोटी सी बात है। हॉ पुलिसवालों का शक है कि यह लड़की भगायी हुई है, पर ऐसा हो भी तो वे कर क्या सकते हैं, क्योंकि दोनों बालिग है, और ऐसा तो रोज ही हुआ करता है।"

"अच्छा? तो यह मामला है।"

· "मुझे इन बातों से क्या? पेशगी पैसे ले लेता हूँ, मेरी बला से ये चाहे जो कुछ भी हों।"

तारा बोली—"मुझे यह सब नहीं मालूम था, पर मैंने जितनी झलक देखी, उससे इतना ज्ञात हुआ कि वह लड़की बहुत अच्छे खानदान की मालूम होती है। मुझको देखकर झट से कमरे का पर्दा खींच दिया।"

नेमीचन्द बोला—"हॉ उधर खानसामों का जाना भी मना है। एक लड़का, वह सरजू है न, वही वहॉ खाना आदि पहुँचाता रहता है। समझ मे नहीं आता कि इतने पर्दे का क्या कारण है। सरजू तो कहता है कि कोई खास बात नहीं है। बहुत होशियार रहना पड़ता है। यह होटल का काम इतना जोखिम का है कि कुछ कहने का नहीं। अब कोई कमरे मे दरवाज़ा बन्द करके सिक्का बनावे तो हम कैसे जान सकते हैं। पर हम सारी बातों के लिये ज़िम्मेदार समझे जाते हैं।

दोनों चाय पी चुके थे। इस समय घड़ी का छोटा कॉटा पॉच और छः के बीच में था, और बड़ा कॉटा तीन के पास आने ही वाला

था। नेमीचन्द और तारा दोनों के लिए यह समय बहुत व्यस्तता का था। थोड़ी ही देर मे केवल चाय पीनेवालों से लेकर पाँच कोर्स डिनर और सैकड़ा की संख्या के दाम तक शराब पीनेवाले आनेवाले थे। नेमीचन्द को इस समय जाकर सब कमरों का निरीक्षण करना था। साथ ही यह भी देखना था, कि खाने आदि ठीक तरह से पक रहे हैं या नहीं। यद्यपि वह अब बड़ा होटल वाला हो गया था, फिर भी उसने अपने पहले की एक आदत नहीं छोड़ी थी। वह आदत यह थी कि लंच और डिनर के पहले वह बनती हुई सारी चीज़ों को खुद चखता था। वह इस बात को समझता था कि सर्विस चाहे कितनी भी अच्छी हो, और वह तथा उसके बेटर कितने भी मुँह मीठे हों, फिर भी यदि रसोई मे कुछ गड़बड़ी हुई तो होटल की खैरियत नहीं है। अवश्य उसकी आमदनी खाना खिलाने से नहीं थी, फिर भी जिन बातों से आमदनी थी, उनका आधार तो यही था। वह चाय क़ी प्याली को निर्णयात्मक रूप से मेज़ पर रखते हुए उठ खड़ा हुआ।

तारा को भी प्रसाधन करना था। ज्यों-ज्यों उसकी जवानी ढलती जा रही थी त्यों-त्यों उसे प्रसाधन की अधिक आवश्यकता मालूम होती थी। वह घंटों आइने के सामने खड़े होकर मेक अप क़रती थी। यह उसके लिए व्यावसायिक आवश्यकता थी। उसे भी जल्दी थी। जब नेमीचन्द उठ खड़ा हुआ तो उसे भी उठना पड़ा। पर वह जिस बात को कहने के लिये आयी थी, वह तो कह नहीं पायी। यद्यपि उस दिन उसे मनोरमा के सम्बन्ध में नेमीचन्द ने जो आश्वासन दिया था, वह उसे यथेष्ठ मालूम हुआ था पर इधर वह मनोरमा को होटल मे जब तब देखती थी, इससे उसके मन में शंका पैदा होती थी। यों तो वह जानती थी कि होटल में अन्य कई लड़कियाँ भी आती जाती हैं, पर एक तो ये

लड़कियाँ नियमित रूप से नहीं आती थीं, कई तो सुना गया था कि पैसे के लिये नहीं बल्कि केवल आनन्द के लिये आती थी, दूसरा उनमे से कोई भी मनोरमा की तरह सुन्दरी नहीं थी। इसी कारण उसे मनोरमा से ही खटका था पर आज तो मौका नहीं लगा। खैर किसी दूसरे दिन सही। दोनों दो तरफ चले गये।

: १० :

जिस कमरे मे वह बीमा का एजेन्ट आया था, उसमे कई दिनों तक कोई स्थायी ग्राहक नहीं आया। कोई सवेरे आता, शाम को चला जाता, रात को आता, और सवेरे ही उठकर चल देता ऐसे ही लोग आते थे। पर एक दिन एक व्यक्ति आया जिसके आते ही सारे होटल मे सनसनी हो गयी। वह व्यक्ति ल्युकोडरमा का रोगी था, उसका शरीर सिर से पैर तक सफेद था, बाल भूरे थे, यहाँतक कि आँखों की पलके भी भूरी थीं। उसके आते ही सारे होटल मे कोढ़ी कोढ़ी का शोर मच गया। बेटर लोग तो खैर उसे झाँककर देख ही गये, यहाँ तक कि होटल के सब रसोईये भी, जो कभी होटल के अँदर नहीं आते थे, वे भी बहाना बनाकर और मालिक की आँख बचा कर उसे देख गये।

नेमीचन्द के दीर्घ तजर्बे मे ऐसा कोई आदमी उसके होटल मे कभी नहीं ठहरा था। कुछ देर तक तो वह सन्देह में रहा कि इस व्यक्ति को जगह देनी भी चाहिये या नहीं क्योंकि उसे डर था कि कहीं दूसरे ग्राहक भड़क न जाँय। बात यह है कि गलती से आम आदमी यहाँ तक कि स्वयं नेमीचन्द ल्युकोडरमा मे और कोढ़ में कोई अन्तर नहीं समझते थे। पर नेमीचन्द के कुछ कहने के पहले ही इस व्यक्ति ने एक कमरा पसन्द कर लिया और उसमे अपना सामान रखवा दिया। नेमीचन्द देखता रह गया। उसने इसी बीच मे देख लिया था कि यह व्यक्ति बहुत धनी मालूम होता है, इस कारण चुप रह गया। उसने कई कोशिशे की कि यह व्यक्ति यहाँ से टले। पहले तो उसने कमरे का रेट ड्योढ़ा बताया, फिर पेशगी माँगी। अभी वह व्यक्ति आराम से बैठा भी नहीं था कि उसने

वह पुलिसवाला रजिस्टर उसके सामने कर दिया। पर उस व्यक्ति ने शान्ति से सारे खाने भर दिये, और चाय तथा अन्य चोजों का आर्डर दिया।

खैरियत यह हुई कि यह व्यक्ति जिसने अपना नाम सेठ जंग-बहादुर बतलाया, हमेशा अपने कमरे का पर्दा डाले रहता था। जिधर को किसान सभा का दफ्तर था, उधर का दरवाजा अलबत्ता खुला रहता था। इससे नेमीचन्द को कुछ तसल्ली हुई। सेठ जंगबहादुर खुद ही लोगों की आँखों से बचता था।

यद्यपि वह सवेरे आठ बजे आया था, पर संध्या तक वह कहीं बाहर नहीं गया। नेमीचन्द उसके सम्बन्ध मे विशेष रूप से खबर ले रहा था। उसे उस व्यक्ति के सम्बन्ध मे बड़ा कौतूहल था। बात यह है कि उसने अपने पेशे के खाने में मिल मालिक लिखा था। एक ब्वाय उस पर तैनात तो था ही, पर उसने यह भी हुक्म दिया था कि इस व्यक्ति के बर्तन अलग साफ किये जॉय, और हमेशा ऐसा करने मे गर्म पानी से काम लिया जाय। यह हिदायत नेमी-चन्द ने इसलिये दी थो कि उसे मालूम था कि अक्सर तो जूठे प्लेट पानी से साफ भी नहीं किये जाते, एक फटे तौलिये से योंही पोंछ लिये जाते थे। नेमीचन्द को अपने ग्राहकों की कोई विशेष चिन्ता नहीं थी, जो कुछ भी चिन्ता थी, वह इस कारण थी कि वह भी कभी-कभी यहाँ खाना खाता था, चाय तो वह हर समय पीता ही रहता था। इसी कारण उसने उचित सावधानो की।

जंगबहादुर शायद बम्बई की तरफ़ से आया था। दिनभर उसने जा खाने की चीजे मंगायीं, उनसे पहले का अनुमान ही सत्य निकलता था कि वह धनी है। पर वह क्यों आया है, इसका कुछ रहस्य संध्या तक नही खुल पाया। रजिस्टर मे तो उसने आने के कारण वाले खाने मे भ्रमण लिखा था। पर भ्रमण भी तो उसने कुछ नहीं किया। स्टेशन से सीधा आया, और तब से कमरे मे ही

लेटा हुआ था। जो ब्वाय उस पर तैनात था, उससे जब भी नेमीचन्द ने पूछा, तो यही पता लगा कि वह या तो लेटा हुआ है या कोई पुस्तक अथवा मासिक पत्रिका पढ़ रहा है। एक खास बात यह थी कि उसने दिन भर में किसी तरह की कोई शराब नहीं मंगायी। ब्वाय से जिरह करने पर मालूम हुआ कि वह अपने साथ कोई शराब की बोतल आदि नहीं ले आया है।

पर रात के आठ बजते ही उसने ब्वाय को एक चिट लिखकर दिया, जिसमे उसने शैम्पेन की एक बोतल मंगायी थी। नेमीचन्द ने जो चिट देखा तो उसे आश्चर्य हुआ। उसके यहाँ इस समय शैम्पेन बिल्कुल नहीं था। जो लोग इस होटल में आते थे वे इस शराब को बहुत कम मांगते थे। फिर भी एक बोतल पड़ी रहती थी। जब शैम्पेन की अन्तिम बोतल खतम हुई उसके बाद किसी ने इसे मांगा नहीं, इस कारण शैम्पेन आयी नहीं। नेमीचन्द ने फौरन साइकिल पर आदमी भेजकर शैम्पेन मंगा दिया। खाने का आर्डर तो पहले ही दिया जा चुका था, और शैम्पेन के साथ-साथ खाना भी उसके कमरे में पहुँच गया।

उस व्यक्ति ने यद्यपि वह अकेला था, बड़े तकल्लुफ़ से खाना खाया। बीच बीच में पेग भी चढ़ाता जाता था। अन्त में उसने प्लेटों को ले जाने का इशारा किया, और बैठे ही बैठे कप मे लाये हुये गरम पानी में उंगलियों को बड़ी अदा से धोकर फिर एक सिगार निकालकर सुलगाया। पेग तो चलता ही रहा। आधी बोतल समाप्त हो चुकी थी।

जब रात के दस बज गये, तो उसने घंटी देकर ब्वाय को बुलाया। उसके कान के पास मुँह ले जाकर उससे कुछ कहा। वह भागा भागा नेमीचन्द के यहाँ गया। नेमीचन्द रात ग्यारह बजे तक काउन्टर पर बैठता था। ब्वाय ने उसी प्रकार से उसके

कान के पास मुँह ले जाकर धीरे से कहा—नम्बर ८ लाल बीबी मंगा रहे हैं।

नेमीचन्द एक बार तो सिहर उठा। फिर सँभलकर बोला—रेट बता दिया ?

ब्वाय ने कहा—हुजूर मैंने तो कुछ नहीं कहा, पर मालूम तो होता है कि जो माँगिये देगा।

नेमीचन्द के दिमाग मे एक बात आई, कि तिगुने पैसे ऐंठ लो, पर उसे साथ ही यह सोचकर बड़ा अफसोस हुआ कि रेट तिगुना बढ़ाने पर भी उसके हिस्से मे विशेष कुछ नहीं आयेगा। फ़ायदे मे तो वही लड़की रहेगी। एक बात तो उसने फौरन तय कर ली कि तारा को नहीं भेजना है, क्योंकि उससे तो कुछ भी नही मिलने का। और वह आज खाली भी नहीं है। मनोरमा भी खाली नहीं है। फिर किसे भेजा जाय ? हाँ, अच्छी याद आयी। कुछ लोग बारह नम्बर कमरे मे एकत्र थे। उनके यहाँ एक नयी लड़की भेजी गयी थी। सूरत से वह बिल्कुल अच्छी नहीं थी पर बहुत अच्छा गाती थी, और वे केवल गाना सुनना ही चाहते थे। पहली दफ़ा लोग गाना ही सुनते हैं। वे लोग चले गये होंगे, क्योंकि बोर्डिंग के छात्र थे, अधिक रात तक ठहर नहीं सकते थे। पता लगाया तो मालूम हुआ कि सचमुच वे लोग चले गये है, और वह लड़की खाली है। ब्वाय से उसने कहा—"वीणा को लिवा लाओ।"

दो ही मिनट मे ब्वाय लौट आया, बोला—"हजूर वह तो जाने से इन्कार करती है। कहती है कि मैं कोढ़ी के पास नहीं जाऊँगी।"

ब्वाय अभी यह कह ही रहा था कि पीछे से वीणा आ गयी। रुँआसे स्वर मे बोली—"देखिये मैं कुछ इन्कार नहीं करती, पर

उसके पास कौन जायेगी ?"

नेमीचन्द ने कुछ देर सोचा, फिर बोला—"दुगुने पैसे मिलेंगे, इसमें हर्ज क्या है ? फिर नहा धो लेना।"

..."नहीं मैं तो सौ रुपये पर भी उसके पास नहीं जाऊँगी।"

..."तुम लोग उससे ख्वामख्वाह डर रही हो। मैंने आज डाक्टरसे पूछा था इसका रोग कोढ़ नहीं है, यह ल्युकोडरमा है। यह छूत से नहीं फैलता। यह वैसे ही है जैसे किसी के बदन पर एक तिल निकल आवे।"

फिर भी वीणा राजी नहीं हुई। तब नेमीचन्द ने ब्वाय से कहा—"जाकर कह दो इस होटल में यह सब काम नहीं होता। समझ गये न ? कहीं पहले से कह तो नहीं आये हो कि यहाँ यह काम होता है ?"

ब्वाय ने कहा—"मैंने कुछ नहीं कहा।"

वह चला गया, पर थोड़ी ही देर में नम्बर ८ से बड़े जोर से झगड़ा करने की आवाज़ आई। नेमीचन्द सरपट दौड़ा, और देखा कि सेठ जंगबहादुर ने ब्वाय का गला पकड़ लिया है और अंग्रेजी हिन्दी मिलाकर गालियाँ दे रहे हैं। नेमीचन्द ने बीच मे पड़कर पहले तो ब्वाय को छुड़ाया, फिर उससे बोला—"सर, आप नाराज क्यों हो रहे है ? यह पढ़ा-लिखा नहीं है, कुछ का कुछ कह गया होगा, आप बताइये कि क्या बात है ?"

सेठ जंगबहादुर शांत होकर बैठ गया, और अंग्रेजी में बोला—"मैंने इससे एक चीज़ मंगाई थी, पर यह स्वाईन मुझसे आकर कहता है कि यहाँ यह चीज़ मिलती नहीं। क्या मैं अन्धा या बहरा हूँ ? कमरे से बाहर नही निकला तो क्या ?—कहकर उसने चुनौती की दृष्टि से नेमीचन्द को देखा और फिर मेज़ की तरफ हाथ बढ़ाकर उसने एक पेग चढ़ाया।

नेमीचन्द किंकर्त्तव्यविमूढ़ खड़ा था। उसकी समझ में नहीं आता था कि क्या कहे। उसने इतना समझ लिया कि यदि इस व्यक्ति को इस समय कोई स्त्री नहीं भेजी गई तो यह फिर हल्ला मचायेगा। नेमीचन्द किसी बात से इतना नहीं डरता था जितना कि शोरगुल और खुली बदनामी से। वह जानता था कि इसमें व्यापार को नुकसान है, और व्यापार ही उसके लिए सर्वोपरि देवता था। मुसीबत यह थी कि वीणा इन्कार कर चुकी थी, और कोई स्त्री खाली नहीं थी। बोला—"सर, हमारे स्टाफ मे तो ऐसे लोग हैं नहीं, आर्डर देने पर बुलाकर मंगायी जाती हैं।"

"तो बुलाओ न? अभी तो साढ़े दस भी नहीं हुआ।"

नेमीचन्द लौट गया, और वीणा से फिर प्रार्थना-सी की कि वह चली जाय। बोला—"चली जाओ, मैं बना रहा हूँ कोई इसमें खतरा नहीं है। चलो तिगुने पैसे दिला देंगे।"

फिर भी वीणा राजी नहीं हुई। तब नेमीचन्द क्रुद्ध-सा होकर स्वयं होटल से बाहर निकल गया। फिर वह अपनी जीप मे सवार होकर शहर की तवायफों के मुहल्ले मे पहुँचा। वहाँ उसने यह उचित समझा कि जिसको चलने के लिए कहे उसे परिस्थिति समझा दे याने उसे यह बता दे कि जो बुला रहा है वह ल्युकोडरमा का रोगी है। ल्युकोडरमा क्या है किसी तो पता नहीं था, इस कारण उसे वर्णन देना पड़ा। वर्णन सुनकर पहली तीन चार तवायफों मे से एक भी राजी नहीं हुई। सबने वही वीणा वाली बात कही। सौ रुपये देने पर भी नहीं जाऊँगी। नेमीचन्द निराश हो गया था फिर भी वह एक और कोठे पर पहुँचा। स्त्री अधेड़ उम्र की हो चुकी थी। रंग साँवला था। आँखों के नीचे काली रेखा थी। सस्ता पाउडर और लिपस्टिक जरूरत से ज्यादा लगा रक्खा था, जिससे वह और भी खराब लग रही थी। नेमीचन्द ने

निष्काम भाव से, इस कारण कि उसे विश्वास था कि यह भी इन्कार करेगी, सब कुछ कहा। उसके पास शायद कोई आया नहीं था। संभव है कई दिनों से कोई न आया हो। बोली—"हाँ हाँ ल्यु-कोडरमा मै समझती हूँ, मेरे एक भाई के हाथ मे था। मैं तैयार हूँ, पर बीस रुपये पेशगी लूँगी।"

नेमीचन्द कुछ हिचकिचाया, फिर उसने उसके हाथ मे बीस रुपये दिये। दोनों जल्दी से होटल पहुँचे, और नेमीचन्द स्वयं उसे नम्बर ८ मे पहुँचा आया। अजीब हालत मे फंसा था, जैसा कि कभी नहीं फंसा था। खैर ऐसी भी समस्याएँ आती रहती है। वीणा अभी तक उसके दफ्तर में बैठी थी, पर उसने उसकी तरफ़ आँख उठाकर भी नहीं देखा, और उसके आते ही जो चाय आ गयी, उसे धीरे-धीरे पीने लगा। उसे वीणा पर बड़ा क्रोध आ रहा था। सचमुच डाक्टर ने कहा था, और इस तवायफ ने भी उसका समर्थन किया कि यह रोग फैलनेवाला नहीं है, फिर ये इन्कार क्यों करती हैं। अच्छी बात है इसका मज़ा चखाऊँगा। कोई काम नहीं दूँगा। जो गाढ़े वक्त पर काम नहीं आती, उससे क्या दोस्ती करना।

इसी प्रकार सोचते हुए वह चाय पीता जाता था, इतने में नम्बर ८ की तरफ फिर शोर मालूम पड़ा। अरे इस बार तो कोई स्त्री चिल्ला रही थी। यह कहाँ है? नम्बर ९ मे या नम्बर १० मे या नम्बर ११ में, क्योंकि इधर तो ८, ९, १०, ११ यही चार कमरे थे। हाँ, फिर आवाज़ हुई। कराहने की। नेमीचन्द चाय की प्याली को करीब-करीब पटककर दौड़ पड़ा। यह शोर तो नम्बर ८ मे ही हो रहा था। उसने दरवाज़े पर उंगली से टकटक किया, तो दर-वाज़ा खुल गया। वह तवायफ ज़मीन पर आधी नंगी पड़ी हुई थी। बुरी तरह कराह रही थी। नेमीचन्द के प्रश्न पर सेठ जंग-बहादुर ने कहा—"इस बुढ़िया को कहाँ से ले आये। एक तो

बुढ़िया तिस पर बीमारी"—कहते कहते एकाएक बहुत गरम होकर नेमीचन्द की तरफ लपकते हुए बोला—"जैसी चीज़ भेजी, उसका वैसा ही व्यवहार कर रहा था। इसे वाकिंग स्टिक से कर रहा था,"—कहकर उसने नेमीचन्द के पीछे से लोहुलुहान वाकिंग स्टिक उठा लिया और उस स्टिक को नेमीचन्द को दिखाया। नेमीचन्द डरकर कई कदम पीछे हट गया।

जंगबहादुर बोला—"हरामज़ादे, होटल चला रहे हैं। कल सवेरे मैं तुम्हे गिरफ्तार कराऊँगा। पैसे के पैसे लो और यह बदमाशी करो। अगर तुमसे चक्की न पिसवाई तो मेरा नाम जंगबहादुर नहीं। निकलो यहाँ से कुत्ते..."

वह तवायफ मौका पाकर पहले ही निकल गई थी। नेमीचन्द ने यह तो समझ लिया कि चक्की पीसने को तो उसे कोई चक्की पिसवा नहीं सकता, बल्कि वाकिंग स्टिक के कॉड के कारण जंगबहादुर को ही सज़ा हो सकती थी। एक क्षण में ये बातें उसके दिमाग मे गुज़र गई। पर उसके व्यापारी मन ने उसे दूसरा पहलू भी दिखलाया। जंगबहादुर को सज़ा तो हो गई, पर उसका होटल तो खतम हो जायेगा। ऐसे होटल मे फिर कौन आयेगा ? लोग करते तो सब कुछ हैं पर आड़ चाहते हैं, 'जब आड़ जाती रहेगी तो कौन आयेगा। इसीलिये दाँत से दाँत पीसकर भी उसने गुस्से को दबाया, और कहा—"हजूर गलती हुई, ये साले खानसामे इतने पाजी हैं ..."

कहकर वह बाहर निकल गया और वीणा के पैरों पर गिर पड़ा। बोला—"जाओ, आज तुम्हारे हाथ मे मेरी इज्ज़त है। अब कुछ मत कहो। मैं जन्म-जन्म तुम्हारा कृतज्ञ रहूँगा। मैं सच कहता हूँ डाक्टर ने कहा कि कुछ नहीं है, नहीं तो मैं उसे अपने यहाँ टिकने देता।"

वीणा ने पैर छुड़ाते हुए रुँआसी होकर कहा . "जाती हूँ, आपकी इज्ज़त मेरी इज्ज़त।"

: ११ :

उस रात को तो नम्बर ८ से फिर कोई शोर नही सुनाई पड़ा, और सब काम शान्तिपूर्वक हो गया। नेमीचन्द यों तो हिसाब कर कराकर साढ़े ग्यारह बजे तक रोज़ चला जाता था। पर उस रात को वह बारह बजाकर तब होटल से गया। जाते समय हेड वेटर को हुक्म दे गया कि यदि रात को (ऐसा कहकर उसने नम्बर ८ की तरफ इशारा किया) कोई शोर हो, तो मुझे फौरन बुला लेना। घर मे जाकर भी उसे शान्ति नहीं मिली, न मालूम उसे क्यों ख्याल हो रहा था कि जंगबहादुर कुछ न कुछ गुल खिलायेगा। पर दिन भर का थका मॉदा था, तिस पर उसने सोते समय शेरी का एक पेग चढ़ा लिया और जब पहली बार उसकी ऑख खुली, तो उसने देखा कि धूप खूब खिल रही है। वह चौंक कर उठ पड़ा, जैसे वह कोई बुरा काम करते हुए पकड़ा गया हो।

पर साथ ही उसे खुशी भी हुई क्योंकि रात को न जगाये जाने का अर्थ यही था कि होटल में सब काम शान्तिपूर्वक चलते रहे। फिर भी वह जल्दी से उठा, और मुँह हाथ धोकर होटल का रास्ता लिया। अपने परिवार से उसका सम्बन्ध कुछ संक्षिप्त-सा था। उसकी मॉ और स्त्री उसके सम्बन्ध मे यही समझती थी कि जितना भी उसको मिल जाय उतना ही अच्छा है। बाकी की आशा नहीं करनी चाहिये। परिवारवाले आवारे भी खाने पीने के लिये घर पर निर्भर होते हैं, कम से कम अधिकतर घर मे ही खाते है, पर नेमीचन्द इस झंझट से भी मुक्त हो चुका था। वह तो अक्सर होटल में ही खाता पीता था। जब चाहे तब आता था, और जब चाहे तब जाता था। उस पर किसी प्रकार की रोकटोक न तो थी

और न हो सकती थी। उसकी विधवा माँ जानती थी कि बेटा चाहे जो कुछ भी करे उसकी व्यावसायिक बुद्धि बिल्कुल सजग है, और वह जो कुछ भी करे, कम से कम उसके कारण परिवार को आर्थिक नुकसान उठाना नहीं पड़ेगा। नेमीचन्द की स्त्री कुछ दूसरे तरीके से सोचती थी, पर उसने सारी बातों के साथ सन्धि कर ली थी, और अपने बच्चों मे ही अपनी परितृप्ति खोजती थी। पति के साथ उसका बर्ताव एक होटल के अगल-बगल के कमरों में रहने वालों की तरह था। उसने बोल दिया, तो वह भी बोल देती थी। तीज त्योहार के अवसर पर या अन्य किसी अवसर पर कुछ घनिष्ठता भी हो जाती थी, पर उस घनिष्ठता मे आत्मा का मिलन नहीं होता था। उनके बीच मे तो तारा, मनोरमा और जाने कितनी खाइयाँ थी।

नेमीचन्द ने होटल मे पहुँचकर ही हेड वेटर से पूछा—"कहो कल सब ठीक तो रहा न ?"

...जी हाँ, नम्बर ८ से तो कोई गड़बड़ी नहीं हुई।

नेमीचन्द ने मन मे सोचा कि उस तवायफ़ पर जंगबहादुर का एतराज़ कुछ उचित ही था। पर वह भी अजीब निकला, बजाय उसे निकाल देने के,—तोबा तोबा ! वह कुछ हँसा। आई हुई चाय तथा नाश्ते का सद्व्यवहार करते हुए बोला—"और कोई बात तो नहीं है ?"

हेडवेटर किशन ने कुछ कहा नही, पर वह सिर खजुआता हुआ वहीं पर खड़ा रहा। नेमीचन्द समझ गया कि कोई अप्रिय बात है जिसे वह कहना नहीं चाह रहा है। उसका माथा एकाएक झन्ना उठा, सब स्नायु कड़े हो गये। चाय की प्याली को शब्द करते हुए मेज़ पर रखकर बोला—"क्या बात है, साफ़-साफ़ कहते क्यों नहीं ?" .कहकर उसे उत्सुक नेत्रों से देखा।

किशन ने सिर खजुआना जारी रक्खा, फिर एक बार अपनी दाहिनी तरफ देखा फिर बाईं तरफ, बोला—"हजूर कल वह जो तवायफ आयी थी न .."

इतना सुनते ही नेमीचन्द के रोंगटे खड़े हो गये। हाँ, हाँ, उस मामले में तो कुछ अन्तिम बात हुई नहीं थी। वह स्त्री एकाएक नम्बर ८ से निकलकर चली गई थी, उसके बाद क्या हुआ, पता नहीं। कहीं पुलिस में तो नहीं चली गई। पूछा—"हाँ उसका क्या हुआ। बताते क्यों नहीं? तुम यह तो नही कहने जा रहे हो कि वह मर गई?" ..कहकर वह आधा खड़ा हो गया।

किशन ने कहा—"नहीं नहीं हजूर, वह मरेगी क्या? वह तो सौ दो सौ को मारकर तब मरेगी। कल जब वह उस कमरे से निकली, तो उसको हम लोग समझा बुझाकर नीचे वाले गोदाम के कमरे में ले गये। वहाँ उसकी मरहम पट्टी की। उसकी साड़ी वगैरह बदलवा दी।"

बीच में ही अधीर होकर नेमीचन्द ने पूछा—"उस खूनवाली साड़ी का क्या किया?"

किशन ने कहा—"हजूर उसे फौरन मैंने आग में झोंक दिया। इस बात को तो पूछने की कोई जरूरत ही नहीं थी। ऐसे छोटे मोटे काम तो हम भी कर लेते हैं।"

नेमीचन्द बहुत खुश हुआ, और फिर बैठकर चाय पीने लगा। बोला—"अच्छा फिर क्या हुआ?"

किशन बोला—"रात भर हम लोगों ने उसे यहीं पर रक्खा, सवेरे उठकर गयी। गई क्या उसे तांगे पर पहुँचा दिया। कह रही थी कि पुलिस मे रिपोर्ट लिखायेगी।"

किशन ने जो कुछ कहा वह यहाँ तक ठीक था, पर उसमे झूठ इतना था कि उसी ने उस स्त्री को यह सिखाया था कि वह पुलिस

में रिपोर्ट करने की धमकी दे। वह स्त्री तो इस बात से घब-ड़ाती थी। कहती थी कि मैं तो जानती थी कि ऐसा ही कुछ होगा, इसलिये मैंने पहले ही बोस रखवा लिये थे। पुलिस मेरी थोड़ी ही सुनेगी, सैकड़ों बार तजर्बा कर चुकी, पुलिस हमेशा उन्हीं की सुनती है। पर किशन ने उसका ढाढ़स बँधाया था। बोला था—"बीबी घबड़ाती क्यों हो ? न तुम्हें पुलिस मे जाना है, न रिपोर्ट लिखाना है। बस तुम धमकी दे दो, और सौ रुपये तुम्हारे हुए।"

इतने पर भी वह स्त्री जिसका नाम अजीजन था, तैयार नहीं होती थी, पर किशन ने उसे समझा-बुझा कर तैयार किया। बोला—"बस तुम कह दो कि रिपोर्ट लिखाओगी, और सौ रुपये ले लो।" कहकर उसने फिर आँख मारकर कहा—"पर इसमे से कितने तुम मुझे दोगी ?"

अजीजन कुछ कह भी नही पाई थी कि किशन बीच ही मे बोल पड़ा—"जाओ, मैं तुम से कोई बेइन्साफी नहीं करूँगा, मुझे सिर्फ पचास दे देना। रही न पक्की बात ?" ..कहकर उसने अजीजन की तरफ देखा।

अजीजन राज़ी हो गई। तब किशन बोला—"मैं इन लोगो को ऐसा डराऊँगा, ऐसा डराऊँगा कि साले तुम्हारे पैरों पर आकर गिरेंगे। बस तुम किसी तरह न मानना। सवेरे ही मैं नेमीचन्द को तुम्हारे दरवाज़े पर हाज़िर करूँगा।"

बात तो इतनी हुई थी, पर किशन ने नेमीचन्द से कहा—"हजूर मैंने बहुतेरा समझाया, पर उस चुड़ैल ने एक नहीं मानी। रात को भी बराबर ज़िद करती रही, और सवेरे तो जाते वक्त धमकी देती हुई गई कि मुझे कोई ऐसी वैसी न समझ लेना, अगर नेमीचन्द और उस कोढ़ी को जेलखाने न भिजवाया तो मेरा नाम अजीजन नहीं।"

नेमीचन्द भी खुर्राट था, वह ऐसी धमकी मे आने वाला नहीं था। वह जानता था कि उसके पास कुछ कस्टमर ऐसे हैं जो उसे एक बार फाँसी के तख्ते पर से भी उतार सकते है। पर वही बात सामने आ गई कि मान लो जेल से तो बचे, पर होटल गया तो क्या होगा। उसने कहा—"तो वह नहीं मानी ?"

किशन बोला—"जी नहीं। ताँगे पर चढ़ते वक्त तो अपनी वह खून वाली साड़ी भी माँग रही थी, पर मैंने किसी तरह समझा बुझाकर विदा किया।" बोली—"होटल की तलाशी करवाऊँगी। मुझे भी बहुत गालियाँ देती थी।"

नेमीचन्द बहुत घबड़ा गया। उसने कलाई घड़ी की तरफ देखा। बोला—"कहीं वह पुलिस मे पहुँच तो नहीं गई ? नम्बर ८ वाला बड़ा हरामजादा निकला। उसका क्या है वह तो फुर्र से उड़ जायेगा, और मरेंगे हम।"

· "जी हाँ, यह एक ही फितरती निकला।"

नेमीचन्द जल्दी से एक टोस्ट खाते हुए उठ खड़ा हुआ, बोला—"चलो तुम मेरे साथ। अब बताओ सवेरे सवेरे उस मुहल्ले मे जाना, कोई देख ले तो न मालूम क्या समझे। अच्छी बात है, मैं कौड़ी-कौड़ी इस कोढ़ी से वसूल करूंगा।"

दोनों जीप पर सवार हुए, और अजीजन के कोठे पर पहुँचे। सारे मुहल्ले मे इस समय सन्नाटा था। जब सारी दुनिया जागती है तो यह मुहल्ला सोता है। गीता मे संयमी के सम्बन्ध मे जो वाक्य कहा गया है कि जब सृष्टि सोती है तो संयमी जागता है, उसकी कैसी अजीब पैरडी है। नेमीचन्द को शर्म आ रही थी। जीप ठहराकर ही दोनों जल्दी-जल्दी अजीजन के कोठे पर पहुँच गये। अजीजन इस समय सो रही थी पर जूतों की आवाज सुन कर वह उठ बैठी। सामने जो सस्ता पाउडर रखा हुआ था, उसका हाथ यंत्रचालितवत उसकी तरफ गया, पर पाउडर लगा सकने के

पहले ही नेमीचन्द और किशन उसके समाने आ गये। वह उठना चाहती थी, पर उठ न सकी। किशन ने पहले तो उसे बहुत जोर की एक आँख मारी, बोला—"यह लो साहब खुद तुम्हारे यहाँ आये है। अब जो बात करना हो सो इनसे कर लो। मुझे गालियाँ दे रही थी उससे क्या फायदा था ?"

अजीजन ने दोना की तरफ से मुँह फेरते हुए कहा—"मैं कुछ नहीं जानती हूँ। मैंने अपने भतीजे रहमान को बुलाया है, वही सब कुछ करेगा। बुलाकर इस तरह से बेइज्जत करना यह भी कोई बात है। साहब है तो अपने घर के है, मैं गरीब हूँ तो क्या, पुलिस किस दिन के लिये है। मेरी तुम लोगों की बात तो अदालत मे ही होगी।"

नेमीचन्द ने पूछा—"यह रहमान कौन है ?"

यद्यपि किशन को कुछ भी पता नही था, फिर भी उसने नेमीचन्द के कान के पास मुँह ले जाकर कहा—"हजूर यह यहाँ एक बहुत नामी गुंडा है। दस बीस कत्ल कर चुका है।"

नेमीचन्द ने अधैर्य के साथ अजीजन से कहा—"देखो अजीजन, हमारा तुम्हारा रिश्ता रोज का है। हमे क्या पता था कि वह कोढ़ी जानवर भी है। अब ऐसी बात तो करो नहीं जिससे कि मुझ पर आँच आवे। मैं तो तुम्हे बुलाकर ही ले गया था।"

अजीजन बोली—"तो मुझे आपसे कुछ मतलब थोड़े ही है। मैं तो उस कोढ़ी के खिलाफ ही रिपोर्ट लिखवाऊँगी। मुझे तो उसी को चक्की पिसवानी है।"

नेमीचन्द ने कहा—"पर ऐसा हो जो नहीं सकता। तुम सारी बात समझती नहीं हो। किशन तुम इन्हे समझाओ।"

किशन मानो इसी के लिए तैयार था। बोला—"बीबी तुम भी नाहक मे परेशान होती हो। अब मान लो रहमान आवे, और रात को सोते मे उस कोढ़ी को मार डाले, या पुलिस आवे और कोढ़ी

को गिरफ्तार करे तो आफत तो हम सब लोगों पर आयेगी। लाखों का कारोबार बिगड़ जायेगा। तुम्हे क्या मिलेगा ? तुम समझो कि ज़ीने पर चढ़ती हुई गिर पड़ी।"

कहकर उसने अजीजन को प्रोत्साहन देते हुए आँख मारी। अजीजन बोली—"मैं ऐसा क्यों समझूँ ? तुम्हीं लोग यह न समझ लो कि तुम लोगों पर कोई खुदाई आफत आई, और तुम उसी मे मुब्तिला हो। मैं नहीं मानती।"

किशन ने नेमीचन्द की तरफ उस प्रकार से देखा जैसे कोई डाक्टर रोगी की हालत को निराशाजनक पाकर उसके प्रियजनों की तरफ देखता है। नेमीचन्द विशेष घबड़ाया हुआ था। वह मैजिस्ट्रेटों से उतना नहीं घबड़ाता था जितना गुंडों से घबड़ाता था। यद्यपि वह जीप ही मे आता जाता था, फिर भी न मालूम कौन कहाँ से कूद पड़े। अभी तो उसे बहुत कुछ करना था। रहमान। नाम से ही कुछ भय मालूम होता था। दस-बीस कत्ल कर चुका। कोई भयंकर आदमी होगा। उसने निराशा के साथ किशन से कहा—"तुम्हीं इन्हे समझाओ, मेरी तो कोई बात मानती नहीं।"

किशन ने बहुत मासूम चेहरा बनाया जैसे मन्दिर-प्रवेश के समय भक्तों का चेहरा होता है। बिल्कुल निबुद्धि, एक गाल पर मारो तो दूसरा गाल बढ़ा दे ऐसा। कुछ विषाद के स्वर मे बोला—"देखो बीबी, इतने बड़े साहब तुम्हारे यहाँ आये हैं, कुछ तो लिहाज़ करो।"

.."मेरा किसने लिहाज़ किया ?" ..कहकर वह कराहने लगी। बोली—"पता नहीं कैसा घाव हो गया। उस कोढ़ी ने पूरी छड़ी डाल दी थी। तुम लोगों का सबका बुरा हो। आह, आह"... कहकर उसने मुह फेर लिया।

तब किशन ने मौका जानकर नेमीचन्द को इशारा किया कि

वह नीचे चला जाय। बोला—"आप जाइये, मैं बीबी से बात करूँगा। जब तक बीबी मेरी बात नहीं मानेगी तब तक मै यहीं बिना दाना-पानी के पड़ा रहूँगा। और रहमान आवे तो वह मुझे कत्ल करे।"

नेमीचन्द चला गया। जब जीप के चले जाने की आवाज़ हुई, तब किशन एकाएक अजीजन से लिपट गया। बोला—"वाह तुमने क्या कमाल किया। नेमीचन्द इतना डर गया कि मैंने उसे इतना डरा हुआ कभी नहीं देखा था।" ..कहकर वह पास सटककर बैठ गया, और अजीजन को अपनी तरफ खींचते हुए बोला—"तुमने तो सुरैया की नाक काट दी। ऐसा स्वाँग रचा कि बस मै फिदा हो गया। अब रुपये तो तुम्हे मिल ही जायेंगे, बिल्कुल सोच मत करो। शाम तक रुपये तुमको मिलेंगे।"

बात पक्की हो गई, और वहाँ से किशन शहर मे दो-तीन घटा घूमने के बाद होटल पहुँचा। वहाँ नेमीचन्द विरही की तरह उसकी राह देख रहा था। दूर से ही उसने देखा कि किशन का चेहरा रुँआसा है। तो क्या मामला तय नहीं हुआ। वह घबड़ाया। पर किशन आ गया था इसलिये उसने पूछा-"काम तो बन गया ?"

किशन पहले से अधिक रुँआसा होकर बोला—"हजूर क्या बतावे ? बड़ी चुड़ैल निकली। किसी तरह डेढ़ सौ पर राजी कर लिया था, इतने मे वह रहमान आ मरा। इसलिये पचास और पर मामला तय हुआ।...कहकर उसने नेमीचन्द का चेहरा देखा।"

नेमीचन्द सुनकर बहुत अप्रसन्न हुआ। बात यह है कि उसे ये पैसे गाँठ से देने थे। वह हिचकिचाने लगा। किशन समझ गया, बोला—"तो हजूर जाकर कह देता हूँ कि यह मूर्ज़ हमारे बूते का नहीं है, तुम पुलिस के पास जाओ चाहे कहीं जाओ।" कहकर फिर वह सोचते हुए बोला—"रहमान नीचे खड़ा है, उसे बुला लाऊँ ? आप ही उसे डाँट फटकार बता दीजिये। मेरे

कहने से उतना असर नहीं हो सकता। आप लोग बड़े आदमी है, मुमकिन है रोब में आ जाय।"

रहमान का नाम सुनते ही नेमीचन्द बहुत झिझका, नाराज़ हुआ, बोला—"कहाँ है साला, अभी साले को गिरफ्तार कराता हूँ। उसकी इतनी हिम्मत कि यहाँ आ गया।"

किशन अपने मालिक को खूब अच्छी तरह पहचानता था, कान के पास मुँह ले जाकर बोला—"हजूर कहीं सुन न ले, नहीं तो आप तो बड़े आदमी है, आपका क्या? मुझे कहीं मारकर डाल देगा और बाल-बच्चे रोते रह जायेंगे।"

पहले से धीमी आवाज़ मे नेमीचन्द ने कहा—"तो क्या वह इतना भारी सरकश है?"

"जी हाँ, बीस कत्ल कर चुका है।"

"बीस कत्ल कर चुका, और गिरफ्तार नही हुआ?"

"हजूर आप तो जानते ही है, इनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ता! बड़े-बड़े रईस इनके पीछे हैं।"

"रईस इसके पीछे है?"

"जी हाँ, उन्हीं के इशारे से तो सब काम होता है।...कहकर वह बोला—उसे बुलाऊँ? आपसे शायद डरे।"

पर नेमीचन्द ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नही किया, और रुँआसा-सा होकर जैसे स्कूलसे भागा हुआ लड़का कान पकड़कर घर लाया जाता है, काउन्टर से रुपया निकाल करके दे दिया। किशन ने उन रुपयों को उससे भी अधिक रुँआसा होकर लिया, मानो उसी के जेब से रुपये जा रहे हों। फिर वहाँ से सीधे अजीजन के पास पहुँचा और उसे पचास रुपये दे दिये। बोला—"तुम तो नाहक को घबड़ा रही थी। पर मैं तो गरीबों का साथ देता हूँ, मुझे याद रखना, समझी?"

: १२ :

अजीजन के यहाँ से लौटकर किशन ने नेमीचन्द से कहा—

"हजूर वाजिब तो यही है कि ये रुपये उस कोढ़ी से वसूल किये जायँ" ..कहकर उसने मालिक को देखा।

नेमीचन्द देर से यही बात सोच रहा था, बोला—"मै भी यही सोच रहा था। पर वह आदमी इतना बदमिजाज है कि मुझे बड़ा डर लगता है। यह जिस दिन यहाँ से जायेगा उस दिन मैं बतासा चढ़ाऊँगा।"

किशन बोला—"पर हजूर, कसूर वह करे और सजा आप भुगतें, यह कोई बात भी है। आप उससे डेढ़ सौ रुपये वसूल कीजिए और भी कुछ वसूल कीजिये।"

नेमीचन्द की बाछें खिल गईं, पर यह उसकी समझ मे नहीं आ रहा था कि कैसे क्या हो। तब किशन ने अपनी सारी योजना नेमीचन्द को समझायी। थोड़ी देर मे दोनों खुशी-खुशी नम्बर ८ मे पहुँचे, पर उसमें प्रवेश करने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। किशन ने मृदु धक्का-सा देकर नेमीचन्द को उस कमरे मे भेज दिया और खुद बाहर खड़ा रहा।

नेमीचन्द को देखते ही जंगबहादुर गुर्राने लगा। बोला—"क्या बात है?"

नेमीचन्द जो कुछ सोच आया था, सब भूल गया और लाब—"हजूर एक बड़ा हादसा हो गया, इसलिये आपको तकलीफ देने आया हूँ।"...कहकर उसने कुर्सी की तरफ देखा, पर बैठने की हिम्मत नहीं हुई। कल की वह छड़ी सामने ही पड़ी थी।

उस व्यक्ति ने भौहे तान ली, बोला—"क्या?"

नेमीचन्द बोला—"कल वह जो लड़की आई थी।"

बीच मे ही बात काटकर जंगबहादुर बोला—"लड़की नहीं बुढ़िया।"

..."जी हाँ, वह जो आई थी सो यहाँ से तो जोश मे उठकर चली गई, पर होटल के ज़ीने पर ही बेहोश हो गई। बहुतेरी कोशिश की गई कि उसे होश मे लाया जाय, पर वह होश मे नही आई। तब मै तो यहाँ था नही, ये लोग घबड़ाकर उसे अस्पताल ले गये। वहाँ डाक्टर ने सारी चोटें लिखी है, और सुनता हूँ कि होश आने पर उसने कुछ बयान भी दिया है। पर डाक्टर के सामने बयान देकर ही वह फिर बेहोश हो गई। अभी पुलिस के सामने बयान नहीं हुआ। तभी मैं घबड़ाकर आपके पास आया हूँ। आप तो मिल मालिक है, पर मै तो मामूली टूटपूँजिया होटल वाला हूँ। मैं जेल मे गया तो मेरे बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे।"

जंगबहादुर के चेहरे पर का वह रूखा भाव चला गया था, पर वह कुछ डरा हुआ भी नहीं था। बोला—"ऐसी हालत मे तुम्हे उसे अस्पताल नहीं भेजना चाहिये था। यहीं उसका इलाज कराते। तुम्हारी यह बुढ़िया बड़ी नाजुक निकली। खैर, तुमने बेवकूफी करके उसे अस्पताल भेज दिया, तुम ही भुगतो।"

"...पर हजूर मै तो कह चुका कि मै उस वक्त था ही नही, नहीं तो कुछ न कुछ तरकीब करता। अब आप अगर मदद न दे तो बड़ी मुसीबत आयेगी।

"...आवे, मैं तो आज चला जाऊँगा।"

"...पर हजूर उसने तो सारा बयान आपके ही खिलाफ़ दिया है, मैं भी आपके साथ-साथ पिसूँगा ज़रूर, पर आप पर भी आफत आयेगी। डाक्टर तो यहाँ तक कहता है कि पता नहीं यह औरत अच्छी होगी या मरेगी। कहता है कि लीवर तक चोट आई है। मैं डाक्टर से मिल आया हूं।"

जंगबहादुर खड़ा हो गया, साथ-ही-साथ नेमीचन्द पीछे की ओर दरवाज़े की तरफ़ एक कदम खिसका, जंगबहादुर दो तीन बार कमरे में लम्बाई में टहलते हुए बोला—"अगर वह मर गई, तब तो कोई बात ही नहीं, सवाल तो तब है जब कि वह ज़िन्दा हो जाय और बयान दे। कहकर वह एकाएक रुका और नेमीचन्द के बिल्कुल सामने आकर बोला—"ऐसा नहीं हो सकता है कि यह दिखाया जाय कि मैं इस होटल में ठहरा ही नही ?...कहकर वह उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा।"

नेमीचन्द समझ गया कि अब जंगबहादुर की फूँक सरकी है। सहानुभूति के स्वर मे बोला—"अपनी तरफ़ से तो मैं जो आप कहे, उस पर तैयार हूँ, पर वह रजि टर मौजूद है, और उस पर रोज़ पुलिस वालो का हस्ताक्षर होता है।"...कहकर वह जंगबहादुर को घूरने लगा। अब उससे डरने की कोई बात नही थी। साँप के दाँत टूट चुके थे।

जंगबहादुर हट गया, और फिर दो तीन बार टहलकर बोला—"तो अब क्या ह.ना चाहिए। मुझे ता तुम पर बड़ा गुस्सा आता है। न तुम उस चुड़ैल को लाते, और न मुझे इतना गुस्सा आता। तुम्हो बताओ वह मेरे लायक थो ?"

नेमीचन्द फ़र्श की तरफ़ देखते हुए बोला—"जो कुछ होना था सो तो हो चुका। मै उसके लिये सज़ा भुगतने के लिए तैयार हूँ। पर डाक्टर तो एक हज़ार माँगता है, कहीं पुलिसवालो पर पहुँच गया तो वे इससे भी चौगुनी हाँकेगे। और मेरे पास इतने रुपये नहीं है।

जगबहादुर बोला—"कहीं से लेकर दे दो, नहीं तो तुम्हारी आफ़त है। मेरा क्या ? मुझ पर कभो आँच नही आ सकती।"...कहकर वह फिर टहलने लगा।

"तो फिर यह होती है, मैं क्या करूँ! होटल से कुछ बचता

नहीं। मैं गरीब आदमी हूँ, एक हजार रुपया कहाँ से लाऊँ। किसी तरह बटोरकर तीन-चार सौ ला सकता हूँ।"

जंगबहादुर उसी प्रकार टहलता रहा, कुछ बोला नहीं। चाल व्यर्थ गई जानकर नेमीचन्द चोर की तरह कमरे से निकल गया। किशन तो सब कुछ सुन ही रहा था।। नेमीचन्द बोला—"बड़ा हरामी है, बनता मिल मालिक है और साला मुझे फँसाकर खुद भागना चाहता है।"

होटल के दफ्तर मे पहुंचकर किशन ने कहा—"हजूर आप घबड़ायें नहीं। ये लोग एक पेच मे चित थोड़े ही होते हैं। अभी देखिये मैं तरकीब करता हूँ।"

थोड़ी ही देर में नम्बर ८ के ब्वाय ने आकर कहा कि कोढ़ी बिस्तरा बंधवा चुका। बिल मांग रहा है। नेमीचन्द ने किशन की ओर आँख से प्रश्न किया। किशन बोला—"जाकर कह दो कि वह जा नहीं सकते।"

उस ब्वाय ने ऐसा ही जाकर कहा तो नम्बर ८ की तरफ बहुत जोर का शोर हुआ। जंगबहादुर गालियाँ दे रहा था। किशन ने नेमीचन्द से कहा—"आप जरा होटल से चले जाँय, मैं उधर से हो आता हूँ। देखूँ कितना सरकश है।"

किशन नम्बर ८ के सामने गया तो जंगबहादुर ने उसे कहा—"यह क्या बदतमीजी है? मेरा सामान क्यों नहीं निकालता?"

किशन ने अदब के साथ कहा—"हजूर हम लोग तो हुक्म के गुलाम है। जैसा हुक्म मिलता है वैसा करते है। साहब डर-कर कल के वाकया की खुद ही पुलिस मे रिपोर्ट लिखाने गये है। हमे कह गये कि जबतक हम न आवें नम्बर ८ को जाने न देना।" कहकर उसने मजबूरी दिखाई।

जगबहादुर भौचक्का हो गया, बोला—"खुद ही रिपोर्ट लिखाने गया? कैसा अहमक है अपनी आफत आप बुलाता है।"

किशन ने कहा—"हजूर हम तो नौकर है, आप जैसा कहेंगे वैसा करेंगे, वे जैसा कहेंगे वैसा भी करेंगे, यहाँ तो सबका हुक्म बजाना है। मुझे इन बड़ी-बड़ी बातों से क्या ?"

जंगबहादुर एकाएक बोला—"क्या वे चले गये ? कितनी देर पहले गये ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि उन्हें वापस बुला लिया जाय ?..." एक के बाद एक प्रश्न करता गया।

किशन ने जैसे कुछ सोचा, फिर बोला—हो क्यों नहीं सकता; सब कुछ हो सकता है, पर कहीं पहुँच न गये हों।

"तो जल्दी दौड़ो जैसे हो वापस बुलाओ।"

किशन घबड़ाकर दिखाते हुए दौड़ पड़ा। उसे तो मालूम था कि नेमीचन्द कहाँ गया है। वह वहाँ पहुँचकर नेमीचन्द से बोला—"चलिये शिकार तैयार है।"

नेमीचन्द को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ, पर किशन तो सामने खड़ा था। रास्ते में दोनों खूब घुल-घुल कर बाते करते रहे। दूर से ही उन लोगों ने देख लिया कि जंगबहादुर बरामदे से देख रहा है। वे दोनों मन-ही-मन हँसे और सीधे पहुँचे। किशन ने पहले कहा—"हजूर और दो मिनट देर हो जाती तो सारा खेल बिगड़ जाता। ये दारोगा जी से अभी दुआ सलाम कर ही रहे थे कि मैं पहुँच गया।"

जंगबहादुर ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। उसने नेमीचन्द को इशारा किया और दोनों नम्बर ८ मे चले गये। दरवाजा बन्द कर देर तक बात करते रहे। न मालूम क्या बातचीत हुई ? नेमीचन्द बहुत खुश होकर कमरे से निकला। दफ्तर पहुँचकर उसने किशन को एक दस रुपये का नोट दिया, और नम्बर ८ के ब्वाय को बुलाकर कहा—"जाओ साहब का बिस्तरा खोल दो, साहब अभी कई दिन रहेंगे।"

: १३ :

उस दिन नेमीचन्द दिन भर बहुत खुश रहा। किशन ऊपर से मुँह बनाये रहा कि साहब को ऐसा पता लगे कि वह नाखुश है, पर मन मे वह बहुत खुश रहा क्योंकि यदि नेमीचन्द ने बहुत बड़ा दॉव मारा था तो उसने भी कम दॉव नहीं मारा था। फिर भी वह नेमीचन्द से इस कारण नाखुश रहा कि उसी की बुद्धि से सारा काम हुआ, और उसे केवल दस रुपल्ली थमा दिये गये। खून का घूंट पीकर वह रह गया। और जैसा कि ऐसे मौकों पर होता था उसने यह तय कर लिया कि इस नुकसान को किसी-न-किसी प्रकार शराब मे पानी मिलाकर या अन्य तरीकों से पूरा करना है।

सन्ध्या तक तो कोई घटना नहीं हुई। ऐन सन्ध्या के बाद नेमीचन्द को कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि आज होटल कुछ सूना लग रहा है। कई मिनट तक तो वह सोचता रहा कि यह अनुभूति शायद भ्रम हो। इस कारण उसने कहकर खूब कड़ी चाय मंगवायी पर उसके पीने के बाद भी उसे वह सूनापन मालूम देता रहा। होटल के ग्राहक तो यथारीति आ रहे थे। इस समय जितनी भीड़ होती है, आज उससे कम भीड़ नहीं थी। फिर क्या बात है? उसे जैसे कुछ भय-सा होने लगा, क्या भविष्य मे होनेवाली किसी दुर्घटना की छाया उसके मन पर पड़ रही थी? उसने जगबहादुर से रुपये तो ले लिये थे, पर मन में कुछ थोड़ा-सा डर भी था। कहीं इसने जाँच की या एकाएक कह बैठा कि किसको पैसे दिये यह बताओ, तब तो मुसीबत हो जायेगी।

सामने से किशन मुँह फुलाये जा रहा था, उसे बुलाकर कहा—"क्या बात है? कुछ सूना मालूम हो रहा है।"

किशन ने ऐसा चेहरा बनाया जैसे उसने कुछ सुना ही नहीं, पर नेमीचन्द ने फिर पूछा, तब किशन को कहना ही पड़ा—"साहब आज उन लोगों ने स्ट्राइक कर दी है।"

नेमीचन्द एकदम घबड़ा गया, बोला—"स्ट्राइक कर दी ? किन लोगों ने स्ट्राइक कर दी ?"

किशन बोला—"तारा, मनोरमा वगैरह ने। तभी आपको सूना मालूम हो रहा होगा।"

नेमीचन्द खबर के नयेपन से एकदम खड़ा हो गया, फिर बैठ गया। बोला—"आखिर बात क्या है ? मैं भी तो सुनूँ।"

..."बात कुछ भी नहीं, कल जो अजीजन आयी थी, उसी पर नाराज़ हो गईं। उनका कहना है कि जब बाजारू औरतें इस होटल मे लायी जायेंगी, तो फिर वे यहाँ नहीं आ सकतीं।"

..अच्छा ? यह बात। जब वे राज़ी नहीं हुईं, जब उनमें से कोई था ही नहीं और वीणा ने जंगबहादुर के पास जाने से इन्कार कर दिया, तभी तो मैं अजीजन के पास जाने के लिये मजबूर हुआ। तुम तो खुद जानते हो क्या बात थी।

किशन ने कहा—"क्यों नहीं ? मेरी आँखों के सामने ही तो सारी बाते हुईं और अजीजन जिस बुरी तरह यहाँ से गई, वह तो उन्हे मालूम है। फिर उनकी नाराज़गी की कोई वजह नहीं मालूम होती।"

नेमीचन्द ने पूछा—"उन लोगों ने स्ट्राइक की, यह कैसे मालूम हुआ।"

.."हजूर जैसे आपको सूना मालूम हो रहा है, वैसे मुझे भी सूना मालूम हुआ, तो मैं मिस तारा के पास गया।"

"वह भी स्ट्राइक में शामिल है ?"

..."जी हाँ, वह तो सरगना है। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि उसी ने सब को पढ़ाया है।"

..."अच्छा, यह बात। मैं तो उससे कमीशन भी नहीं लेता। वह किस बात की स्ट्राइक कर रही है। यह तो बताओ कि जो हुआ सो हुआ। तुम तो जानते हो कि मैं कभी बाजारू औरतों को इस होटल में बुलाने का पक्षपाती नहीं हूँ। न तो ग्राहक ही ऐसा चाहते है, और न इससे होटल का नाम बढ़ता है।"

किशन बोला—"फिर हजूर एक बात यह भी तो सोचिये कि अजीजन बाजारू है तो ये ही कौन-सी बड़ी भारी सतियाँ है। मैं तो इनमे और उनमें कोई फ़र्क नहीं समझता। बल्कि मेरी निगाह में तो वे औरतें तो किसी कद्र अच्छी है, वे जो है उसी शक्ल मे सामने आती हैं, पर ये तो एक हाथ में वैनिटी बैग और दूसरे हाथ मे छतरी या किताब ले लेंगी और यह ढोंग करेगी कि वे तो कालेज में पढ़ने वाली है।"

..."क्या किया जाय। ग्राहक इसी मे खुश होते है। लोग कई कारणों से उन मुहल्लों में जाना पसन्द नहीं करते, पर वे बड़े मज़े में होटलों मे चले आते हैं। यहाँ से निकलते हुए या यहाँ आते हुए देख लिया जाय, तो कोई शरम की बात नहीं, क्योंकि बहाना चाय वगैरह पीने का है। तुम तो सारी बात समझते हो। अब यह बताओ कि इनकी स्ट्राइक कैसे खतम हो। ग्राहक तो अभी आयेंगे, फिर जगबहादुर को तो जानते ही हो, उसने कहीं अपने कमरे से मनोरमा को देख लिया। उसने पहले ही से मुझे उसके लिये कह रक्खा है। न पहुचाऊँ, तो एक ही बदमाश है, न मालूम क्या आफत खड़ी कर दे।" कहकर उसने एकाएक उठते हुए कहा—"वे लोग हैं कहाँ? चलो न मैं ही उनसे बातें करता हूँ।"

इस पर किशन बोला—"अजी हजूर आप कहाँ जायेंगे। स्ट्राइक में तो कायदा यह होता है कि मालिक यह दिखलावे कि उसे कुछ परवाह नहीं है। हमने दस साल पहले एक बार स्ट्राइक की

थी, मालिक फौरन होटल में ताला डालकर चला गया था आखिर हम लोगों को तो अगले ही दिन काम पर आना पड़ा।

नेमीचन्द बैठ गया, पर उसके मन में सन्देह रहा। वह होटल में ताला डालकर जाने के लिए तैयार नहीं था। बोला—"तो फिर ? तो फिर क्या हो ?"

किशन बोला—"हजूर मैं जाता हूँ, सब ठीक कर लूँगा। आप बैठे रहिये।"

कहकर किशन वहाँ से चला गया और सीधा जहाँ तारा रहती थी वहाँ पहुँचा। तारा पूर्ण रूप से प्रसाधन कर चुकी थी। बोली—"क्या बात है ? मैंने कहा था न कि स्ट्राइक करना बेफायदा है, पर तुम अड़ गये।"

"मेरा इसमें क्या था ? इसमें तुम्हीं लोगों की भलाई थी इसलिये मैंने सुझाव रक्खा। नेमीचन्द की तो फूँक सरक गयी है। रोज रात में सौ दो सौ तुम लोगों से बनाता है, सिर्फ यही बात नहीं, आज जब ग्राहक लौट जायेंगे, तो वे कल किसी और होटल का रास्ता लेंगे। इसीलिये वह ज्यादा घबड़ा रहा है। अब मेरे ऊपर है कि बेटा को कैसा सबक दूँ। कितनी वाहियात बात थी कि उस बीमारीवाली तवायफ को होटल में ले आया।"

तारा बोली—"पर पहले तो ऐसी औरतें कभी नहीं बुलाई जाती थीं। आखिर बात क्या हुई ?"

तारा को सचमुच पूरी घटना मालूम नहीं थी। उसे यह मालूम नहीं था कि वीणा ने इन्कार किया था, और दूसरी कोई लड़की उस समय नहीं थी, इस कारण अजीजन बुलाई गई थी। किशन ने उस घटना को तोड़-मरोड़ कर यों बताया था कि नेमीचन्द इन लोगों से अपना कमीशन अधिक करवाना चाहता है, इस कारण उसने यह चाल चली थी। उसने तारा से यह भी बताया था कि तुम पर तो नेमीचन्द बहुत नाराज है। वह किसी तरह यह चाहता है

कि तुम भी कमीशन देने लगो।

तारा को उसने इसी प्रकार से राज़ी किया था। मनोरमा को किसी और बात से राज़ी किया था। इसी प्रकार उसने एक-एक करके सब लड़कियों को स्ट्राइक मे शामिल कराया था। जो बहुत ही कम महत्त्व की थीं, उनको तो उसने इतना ही कहा था कि तारा, मनोरमा सबने स्ट्राइक करना तय किया है, तुम भी न आना। इस स्ट्राइक को कराने मे किशन के कई उद्देश्य सिद्ध होते थे। एक तो वह नेमीचन्द को यह दिखलाना चहता था कि उसके बगैर होटल चल नहीं सकता। दूसरा वह प्रत्येक लड़की से अपना अलग-अलग मतलब सिद्ध करना चाहता था। तारा से उसका उद्देश्य सबसे न्यारा था। गत कई सालों से तारा से उसका साथ रहा, पर एक बार भी वह उसके कब्जे मे नहीं आयी। जितनी भी लड़कियाँ इस होटल मे काम करती थीं, उनमें से जो खास अच्छी होती थीं, वे तो पहले पहल नेमीचन्द की सेवा में लगती थीं, मानों यह एक रस्म थी जिसके अदा किये बिना कोई इस होटल में प्रवेश नहीं कर सकती थी। इसके बाद ही हेडवेटर का याने किशन का हक होता था। पर तारा ने बराबर उसके इस हक को अदा करने से इन्कार किया था।

पर किशन ने भी पीछा नहीं छोड़ा था। यों तो वह वक्त-बेवक्त मज़ाक और छेड़-छाड़ तो करता ही रहता था, पर तारा हस कर सब बातों को बता जाती थी। तारा मे कोई खास बात नहीं थी, और जब थी तब थी, अब तो मनोरमा के सामने उसका सितारा डूब रहा था। फिर भी किशन को एक ज़िद थी। वह किसी प्रकार तारा को यह दिखाना चाहता था कि उसकी मित्रता के बगैर वह खतम है।

बोला—"नेमीचन्द घबड़ा ज़रूर गया है, पर मुँह से कहता क्या है कि मुझे होटल को आधुनिक तरीके से बनवाना और सज-

वाना है। अच्छा हुआ हड़ताल हो गई। तुम लोग भी छुट्टी पर पर चले जाओ, मैं इसे ठीक करवाऊँ।"

तारा घबड़ा गयी, बोली—"फिर क्या होगा?"

..."होगा क्या? ससुरा ऐसा कहता है, इसलिये यह न समझो कि इसमें कोई सचाई है। यह तो बन्दर-घुड़की है। मैंने ऐसा बहुत देखा। जब होटल मैजेस्टिक मे था, तो कई बार हड़ताले हुई, एक बार होटल-मालिक होटल बन्द करके चला भी गया, पर जब सुना कि बगल में दूसरा होटल खुलने वाला है, तो आकर हमारे पैरों पर गिरा। बस डटे रहने मे ही काम बनेगा।

तारा को इस प्रकार राजी करके वह मनोरमा के यहाँ पहुँचा। वहाँ उसने बिल्कुल दूसरा ही ढग अख्तियार किया। बोला—"मालिक सब बात मानने के लिये तैयार है, बस तुम लोग फौरन चले जाओ। तारा की बातों मे न आना। मैं तो जानता हूँ कि वह किस तरह तुम्हारे पीछे हाथ धोकर पड़ी है, और नेमीचन्द से अपनी पुरानी जान-पहचान का फायदा उठाकर तुम्हें निकलवाने के लिए कहा करती है।"

इसी प्रकार उसने अन्य लड़कियों से भी कहा। नतीजा यह हुआ कि आधे घंटे के अन्दर तारा के अलावा सभी लड़कियाँ होटल में आ गई। इस समय तक ग्राहक भी बहुत आ चुके थे। किशन ने नेमीचन्द से कहा—"हजूर सबको समझा-बुझाकर मैं ले आया पर तारा किसी तरह नहीं मानी। उसने तो यही रट लगाई कि जहाँ बाजारू औरतें है, वहाँ मैं हर्गिज नहीं जा सकती।"

..."न आवे, मैं तो उससे छुटकारा चाहता था।"

उस दिन रामचरित्र, हुक्कू आदि आये तो उन्हें वीणा पेश कर दी गई। बता दिया कि तारा बहुत बीमार है। रामचरित्र वगैरह ने एक बार भी यह नहीं पूछा कि कौन-सी बीमारी है और क्या बात है? मनोरमा जंगबहादुर के यहाँ भेजी गई।

———

: १४ :

जब तारा के यहाँ तीन चार दिनों तक कोई नहीं आया, तो उसके कान खड़े हो गये। उसे कुछ खटका-सा लगा। वीणा का घर सबसे पास पड़ता था। वह संध्या समय वहाँ पर गयी तो उसे मालूम हुआ कि वीणा होटल मे गयी है। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि वह यह समझती थी कि हड़ताल चल रही है। मन में इच्छा हुई कि किशन के पास जाकर सारी बातों का पता लगावे, पर किशन से वह मन-ही-मन चिढ़ती थी। होटल में एक यही आदमी था जिसे वह कभी बर्दाश्त नहीं कर पायी। जब भी वह मिलता था, तो ऊपर से तो भद्र बना रहता था, पर इस प्रकार से घूरता था कि किसी भी प्रकार उससे छुटकारा मिलने पर ही शान्ति मिलती थी। कई बार उसने छेड़छाड़ भी की थी, पर तारा ऐसे समय उसके सामने से हट जाती थी। किसी तरह परिस्थिति बच भर जाती थी। वह जानती थी कि किशन उससे क्या चाहता है। होटल की दूसरी स्त्रियों से वह किस प्रकार जबर्दस्ती करता था, यह उसे मालूम था। इसी कारण वह उससे और भी चिढ़ती थी। इस समय उसके पास जाने की आवश्यकता होते हुए भी वह हिच-किचाई।

वह घर लौटने लगी। पर मन में शान्ति नहीं थी। थोड़ी देर में फिर निकली और 'होटल डी ताज' के सामने होती हुई निकली। होटल के कमरों में तो उसी प्रकार रंग-रलियाँ जारी थीं, जैसे हमेशा हुआ करती थीं। नीचे से कुछ विशेष मालूम नहीं पड़ा, पर उसे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे नम्बर ८ कमरे में मनोरमा बोल रही हो। उसने कानों को बहुत खड़ा किया, पर कुछ सुनायी

नहीं पड़ा। होटल के सामने किसान सभा के दफ्तर में जैसे दो आदमी बात कर रहे थे, पर कोई बत्ती नहीं जल रही थी। वह होटल से कुछ आगे तक निकल गई, फिर जब लौटी तो होटल के सामने से ही लौटी। अब की बार वह होटल के सामने बहुत धीरे धीरे चली। उसकी सब इन्द्रियाँ सजग थीं, पर अब की बार भी उसे कुछ सुनायी नहीं पड़ा। होटल की सीढ़ियों के सामने आकर उसमे प्रबल इच्छा हुई कि वह ऊपर चली जाय। पर गर्व ने उसे रोक लिया। वह जानती थी कि यदि वह होटल मे जाय तो उसे कोई निकाल नहीं देगा, फिर भी......

वह घर लौट गई। उस रात उसे नींद नहीं आयी। रात्रि के अन्तिम प्रहर मे उसकी आँख कुछ लग गयी, तो उसने स्वप्न में देखा कि वह किसान सभा के दफ्तर में बैठी हुई है। केवल वह है, और कोई नहीं। सामने होटल मे अंधेरा है। कुछ देर तो ऐसा मालूम हुआ, फिर मालूम हुआ जैसे होटल जिस स्थान पर है वहाँ कुछ है ही नहीं। कोई इमारत ही नहीं है। सारा खाली है। उसे भय-सा मालूम हुआ क्योंकि गत कई सालों से जब से उसने अपना असली घर छोड़ा था, तब से होटल ही उसके जीवन का केन्द्र था। वह घबड़ाकर नींद से जग गयी, और फिर सारी वास्तविकता उसके सामने आ गई। सचमुच उसके सामने अंधेरा था। पास में जो पैसे थे, वे एक महीने से अधिक चल नहीं सकते थे। तो क्या वह जाकर उस कुख्यात मुहल्ले मे कोठे पर बैठेगी। वह इस बात की कल्पना मात्र से सिहर उठी। नही, नहीं, वह बल्कि जाकर नेमीचन्द के पैरों पर गिर पड़ेगी। क्या नेमीचन्द जो किसी ज़माने मे उस पर मरता था अब उसके लिये इतना भी नहीं करेगा। ज़रूर करेगा। इन लड़कियों ने बड़ा धोखा दिया। खुद तो होटस में लौट गयीं, और उसे फंसा दिया। उसे तो यह पता भी नहीं लगा था कि रात मे अजीजन होटल मे लायी गयी थी।

यह तो किशन और मनोरमा ने उसे बताया था।

नहीं, वह आज अवश्य होटल लौटेगी।

इस निश्चय पर पहुँच कर वह चाय बनाकर पीने लगी। अब वह निश्चिन्त थी। केवल यही बात सोचना था कि वह लौटेगी तो किस प्रकार और कब। चाय की प्याली पर वह इसी समस्या का समाधान करने लगी। अभी वह एक ही प्याला पी पायी थी कि इतने में किशन का आविर्भाव हुआ। उसने आते ही तारा को बड़े ध्यान से देखा फिर बनावटी खुशी से बोला—"बड़े मौके से आया, मेरे लिये भी एक प्याला बन जाय। कहो क्या हाल है?"

तारा ने एकाएक किशन को देखा, वह बहुत खुश हो गयी; जैसे डूबते को तिनके का सहारा मिल गया। किशन को देखकर यह पहला ही मौका था जब वह भीतर से खुश हुई थी। बोली—"आओ, आओ। बड़े दिनों में आये। सुना कि हड़ताल तो खतम हो गयी, और लड़कियाँ होटल में जा रही हैं।"

किशन ने चाय का प्याला उठा लिया और चुस्कियाँ लेते हुए बोला—"हाँ, क्या बतावें ये लड़कियाँ एक-ही कमीनी निकलीं। किसी ने शायद मेरे खिलाफ भी कुछ कह दिया, नतीजा यह है कि नेमीचन्द की आँखे फिरी हुई है। सुना है मुझ पर वह जो लड़का सरजू है उससे निगरानी कराई जा रही है कि देखे कि मैं तुम्हारे यहाँ तो नहीं आता हूँ। इसीलिये तुम्हारे पास खबर भी नहीं पहुँचा सका। जब होटल से निकलता, तो देखता कि वही लड़का सरजू मेरे पीछे लगा हुआ है। आज काफी घूमघाम कर आया। हाँ हड़ताल तो खतम हो गई।"

..."तो अब मेरा क्या होगा? मैं भी आज लौट जाऊँ?"

किशन ने ठक से चाय की प्याली को तारा की छोटी-सी मेज़ पर रख दिया जैसे उसे धक्का-सा लगा। बोला—"मुझे यह उम्मीद नहीं थी कि तुम ऐसी बात करोगी। दुनिया से सचाई तो उठ

गई, अब तुम मेरे सामने सचाई पर डटने वाली एक ही औरत थी, और अब तुम भी ऐसी बात कर रही हो ?''.. उसने ऐसा मुँह बना लिया जैसे उसकी आत्मा के साथ बलात्कार हुआ हो।

..."तो मैं क्या करूँ ? तुम तो जानते ही हो।"

..."मै जानता सब कुछ हूँ, पर फिक्र मत करो। अभी जब तक मै मौजूद हूँ, तुम्हे कोई खतरा नहीं है। कहकर उसने फिर चाय की प्याली उठा ली, और बोला—तुम रुपये पैसे की बिल्कुल फिक्र मत करो। यह लो सौ रुपये का नोट। नहीं, नहीं, इसे दान न समझो, समझो मेरी जमानत है।"...कहकर उसने जबर्दस्ती उस नोट को तारा के ब्लाऊज़ के अन्दर डाल दिया। तारा ने उसे निकालकर वापस देना चाहा, पर उसने नहीं लिया।"

बोला—"इसे मेरी जमानत समझो। तुम नहीं जानती कि मैं तुम्हे किन आँखों से देखता हूँ। तुमने मुझे हमेशा गलत समझा है। मैं यहाँ हेड वेटर बना हुआ हूँ तो इससे यह न समझो कि मैं किसी रजील खानदान का हूँ। जैसे तुम अपनी बेवकूफी से बड़े घर की होते हुए भी नेमीचन्द के पंजों मे फँसी हुई हो, उसी तरह से मैंने भी ज़िद मे आकर घर छोड़ दिया, नहीं तो मैं भी कहीं प्रोफेसर, डाक्टर या नेता होता, और तुम तो इन लोगों को देख चुकी हो ये लोग कितने शरीफ़ है। इनकी शराफत सिर्फ ज़बानी है। मै अपने को इन लोगो से इस गिरी हुई हालत मे भी किसी से कम नहीं समझता। जिस दिन पहले पहल मैंने तुम को देखा, उसी दिन से तुम्हारी तरफ खिंच गया। खैर जाने दो, एक दफा सिर ऊँचा किया तो उसे नीचा करने को कोई जरूरत नहीं तुम डटी रहो, मै तुम्हे होटल से बराबर खाना पहुचाता रहूँगा।"... फिर स्वर नीचाकर उसके कान के पास मुँह लाता हुआ बोला— "और आज एक बोतल भी तुम्हे दे जाऊँगा। बिल्कुल असली

व्हिस्की जैसी विलायत में आती है, वैसी नहीं जैसी कि नेमीचन्द ग्राहकों को देता है।"

तारा ने कहा—"क्यों तकलीफ करोगे? जब सब लौट गये तो मेरे डटे रहने से होता ही क्या है। कहीं सरजू ने देख लिया तो तुम्हारी भी आफत आ जायेगी।"

प्याली में की बाकी चाय को एक ही घूंट मे सुड़कते हुए किशन ने कहा—"मेरी क्या आफत आयेगी? कोई मैं नेमीचन्द पर ज़िन्दा थोड़े ही हूॅ। कई दिनों से तो मेरे पीछे रज़िया होटल के मैनेजर साहब पड़े हुए हैं, ज्यादा तनख्वाह भी देना चाहते हैं। मेरा क्या बिगड़ेगा, यहाॅ नहीं किसी और होटल मे काम कर लूॅगा।"

किशन की इन बातों से तारा खुश नहीं हुई क्योंकि वह जायेगा तो उसका क्या। बोली—"मैं तो यही समझती हूँ कि मुझे अब लौट जाना चाहिये। जब शरीर का ही सौदा करती हूॅ तो फिर मेरा मान अपमान क्या?"

किशन ने देखा कि सारा खेल बिगड़ना चाहता है, उसने अन्तिम चाल के रूप में कहा—"तुम घबड़ाती क्यों हो? क्या एक यही होटल है? मैं रज़िया होटल में जाऊँगा तो तुम्हे भी साथ मे लेता जाऊँगा। नेमीचन्द भी क्या कहेगा?"

तारा फिर भी कुछ नही बोली। तब किशन ने कहा—"और एक बात तो मैं भूल ही गया था। हुक्कू साहब मुझ से पूछ रहे थे कि तारा कहाँ गई। मैंने कहा साहब मुझे कुछ मालूम नहीं। हुक्कू साहब और उनके दो साथी तुम्हें बहुत चाहते हैं। शायद नेमीचंद से भी पूछा था। बस हुक्कू साहब को भड़का दूॅगा, फिर देखना नेमीचन्द तुम्हारे यहाॅ दौड़ा आयेगा।"

तारा इन बातों से कुछ आश्वस्त हुई। बोली—"अच्छी बात

है दो एक दिन और देख लिया जाय । तुम डुक्कू साहब से जरूर कहना । वे बहुत अच्छे आदमी है ।"

किशन ने आश्वासन दिया, फिर हँसकर बोला-"अच्छे तो सब है बस खराब मैं ही हूँ । अच्छा तो अब मैं जाता हूँ . कहकर वह उठा, बोला—रात ६ बजे तक खाना लेकर आऊँगा और हाँ, ये सौ रुपये तुम ज़मानत के तौर पर रख लो ।"

तारा ने रुपये रखने में आपत्ति की, किशन ने फिर अनुरोध किया । तारा ने फिर मना किया,अन्त मे किशन बोला—"अच्छी बात है जब तुम नहीं मानती हो तो मै यह नोट ले जाता हूँ, पर याद रखना इसे मैं खर्च नहीं करूँगा । मेरे लिये तो बराबर ही है चाहे तुम्हारे पास रहे या मेरे पास ।"

कहकर वह चला गया । तारा ने दो-एक दिन प्रतीक्षा करने का निश्चय किया । किशन ने ठीक भी कहा था कि इसके अलावा और भी तो होटल हैं । पर कमीशन ? दूसरी जगह तो उसे कमीशन देना पड़ेगा । कहीं-कहीं तो कमीशन में आधा दे देना पड़ता है । यदि ग्राहक ने खाना खिलाया, तो फिर फ़ीस का आधा होटल का होता है, नहीं तो एक-तिहाई । किशन तो बड़ा अच्छा आदमी निकला । कैसी आसानी से सौ रुपये का नोट देता था । तारा का यह तजुर्बा था कि लोग और सब कुछ तो आसानी से दे देते है, पर रुपये नहीं देते । पर किशन ?

किशन के सम्बन्ध में इस प्रकार सोचने पर भी वह अपने भविष्य के सम्बन्ध में चिन्ता से मुक्त न हो पा रही थी । यद्यपि किशन ने यह कहा था कि होटल बहुतेरे है, फिर भी तारा को न मालूम क्यों यह विश्वास नहीं होता था कि वह और कहीं भी काम कर सकती है । फिर वह कमीशन वाली बात उसे खाये जा रही थी । 'होटल डी ताज' मे वह कमीशन से बरी थी । बड़े बुरे

समय मे यह हड़ताल हुई, हड़ताल न होती तो उस पर यह आफ़त न आती।

इसी प्रकार वह आशा-निराशा मे डूबती उतराती रही। कभी तो उसे ऐसा मालूम देता था जैसे जो कुछ भी हुआ सो अच्छा ही हुआ, पर कभी उसे बहुत अफसोस होता था।

यद्यपि किशन कह गया था कि रात ९ बजे तक खाना लेकर आयेगा, फिर भी तारा की कलाई घड़ी में दस बज गये, और किशन का कहीं पता नहीं था। वह मन-ही-मन किशन को बहुत गालियाँ देने लगी, और अपने को भी धिक्कारने लगी कि उसने उस पर विश्वास करके यह आफत क्यों मोल ली। इससे तो अच्छा यही था कि वह नेमीचन्द पर निर्भर रह के पड़ी रहती। सबसे दुःख की बात यह थी कि उसने किशन की आशा मे कुछ खाना भी नहीं खाया था। किशन कह जो गया था कि खाना लायेगा।

रात के साढ़े दस भी बज गये, पर किशन नही आया। तारा को अपना सारा भविष्य ही अन्धकारमय ज्ञात होने लगा। किस कुक्षण में वह एक बदमाश के बहकाने पर सब कुछ छोड़कर घर से निकल पड़ी थी। उस समय तो वह अच्छा मालूम होता था, पर बाद को मालूम हुआ कि वह क्या है। घर। अब तो उसका कोई घर न होगा। पता नहीं कहाँ उसका अन्त हो।

ऐसे ही सोचते-सोचते किसी समय उसको झपकी आ गयी और वह सो गयी।

: १५ :

उस बार जंगबहादुर चार छः दिन रहकर ही चला गया था। जाते समय वह सबको इतनी अधिक बख्शीश दे गया था कि उसके चले जाने पर सबने उसकी बड़ी प्रशंसा की। किशन ने मानो होटल के सारे स्टाफ के मतों को व्यक्त करते हुए कहा... "था तो कोढ़ी, पर था अच्छा आदमी।"

इस समाज मे जहाँ पैसा ही सबसे बड़ी वस्तु समझी जाती है, वह वस्तु जिसे प्राप्त करने पर सब वस्तुएँ आप-से-आप प्राप्त हो जाती हैं, और किसी की अपेक्षा नही रहती, वहाँ भला उदारता के साथ बख्शीश देने वाला व्यक्ति अच्छा क्यों न समझा जाये? अच्छाई बुराई का यही जो मानदंड है।

जंगबहादुर के पास तो वीणा भेजी गयी थी, पर उसने खुद देखकर मनोरमा को पसन्द किया था। तब से लेकर जब तक जंगबहादुर रहा, वह मनोरमा को ही बुलाता रहा। जाते समय उसने मनोरमा के सामने यह प्रस्ताव भी रक्खा था कि वह उसके साथ चली चले। पर मनोरमा ने इस प्रस्ताव पर, हाँ, ना, मूलक तरीके से कुछ कहा नहीं था। जंगबहादुर चला गया था। अवश्य न जंगबहादुर ने नेमीचन्द से यह कहा था कि वह मनोरमा को ले जाना चाहता है, और न मनोरमा ने ही इस सम्बन्ध मे उसे कुछ कहा था। तारा के चले जाने के बाद से यों ही नेमीचन्द को बड़ी असुविधा हो रही थी। मनोरमा को जाने देने के लिये वह किसी प्रकार तैयार नही होता। वह तो बल्कि कुछ नयी लड़कियों की तलाश मे था।

पर जंगबहादुर को मनोरमा इतनी पसन्द आ गयी थी कि उसने चले जाने के एक महीने के अन्दर नेमीचन्द को एक कमरा

रिजर्व करने के लिये तार दिया था। पर कुछ ऐसे कारण हो गये कि दूसरा तार आ गया कि वह आ नहीं सकता। पर साथ ही साथ उसने तार से ही दो दिनों का होटल चार्ज भी भेज दिया था। नेमीचन्द तो पहले ही बहुत प्रभावित हुआ था, इस बात से और भी प्रभावित हुआ। उसने दिल खोलकर किशन से "कोढ़ी" की प्रशंसा की।

इस बार तो जंगबहादुर नहीं आ पाया, पर पन्द्रह दिनों के अन्दर ही वह बिना इत्तला दिये होटल मे आ धमका। आते ही उसने चाय के साथ-ही-साथ मनोरमा को भी बुलाने के लिये कहा। जब यह खबर नेमीचन्द को लगी, तो उसने किशन को बहुत जोर की आँख मारी। कहने का मतलब था साला फंसा है।

किशन बोला—"जी हाँ, ऐसा ही मालूम होता है कि मनोरमा ने उस पर कुछ जादू कर दिया, तभी यह लौटकर आया है।... कहकर उसने कुछ सोचा, और कहा—कुछ बनाइये न, यही तो मौका है।"

नेमीचन्द पूरी बात समझ नहीं पाया, बोला—"क्या कोई तरकीब है?"—कहकर उसने किशन को पास आने के लिये इशारा किया, बोला—"जानते ही हो आदमी बड़ा पाजी है।"

"पाजी तो है, पर उस दफा कैसे काम बना था।"

"उस दफे की बात और है, उस दफ़े यह पुलिस की गिरफ्त मे आने लायक मामले मे फंसा था।"

किशन ने कहा—"उस दफे तो पुलिस की वजह से रुपये उगले थे, पर अब की तो इश्क में फँसे है। अब तो और भी काम बनेगा। हा, हा, हा, हा।"

बात नेमीचन्द की समझ मे आ गयी। बोला—"तो क्या उसे खबर भेज दूँ कि मनोरमा की फीस बढ़ गई।"

किशन बोला—"अजी यह तो बहुत छोटी सी बात है। इससे क्या दाव लगेगा। ऐसा दाव मारिये कि कम से कम इकाई दहाई सैकड़ा तो हो, और सो भी जरा बढ़ा हुआ नम्बर हो। समझे न आप ?

नेमीचन्द बोला—"मैं तो कुछ भी नहीं समझा।"

इसके बाद किशन ने दफ्तर का दरवाजा बन्द कर दिया, और नेमीचन्द से कई मिनटों तक चुपके-चुपके बातें करता रहा। इसके बाद दोनों जीप पर चढ़कर मनोरमा के निवास-स्थान पर पहुँचे। वहाँ तीनों मिलकर कुछ देर तक बातें करते रहे। अन्त में किशन और नेमीचन्द उठे। नेमीचन्द बोला—"तो रही न ?"

मनोरमा बोली—"हाँ रही।"

मनोरमा ने कहने को तो हामी भर दी, पर उसके मन ने गवाही नहीं दी। परिस्थितियों के षड्यंत्र के कारण वह इस जीवन में आयी थी, पर थी तो वह नारी। वह भी प्रेम की भूखी थी। जब नेमीचन्द और किशन चले गये तो वह देर तक सोचती रही। बहुत दिनों के बाद जैसे उसके मन ने सिर उठाया था।

किशन सीधे जगबहादुर के कमरे में पहुँचा। वह चाय पीकर नाई बुलवाकर दाढ़ी बनवा रहा था पर उसकी आँखें दरवाजे ही की तरफ लगी हुई थी। किशन को देखकर उसने पूछा—"क्या हुआ ? मनोरमा नहीं आयी।"

किशन ने कुछ उत्तर नहीं दिया, और सिर नीचा करके फ़र्श की तरफ देखता हुआ ऐसे खड़ा हो गया मानो उससे कोई बड़ा भारी अपराध हो गया है, और वह उसके लिये सारी झिड़कियों को सुनने के लिये तैयार है। जगबहादुर ने समझा कि शायद नाई की उप-स्थिति के कारण वह कुछ उत्तर नहीं दे रहा है। इसलिये उसने नाई की तरफ ऐसे देखा जैसे कोई कुत्ते की तरफ देखता है। उस की दृष्टि का मतलब यही था, कि जैसे कुत्ते के सामने कोई पर्दा

नहीं किया जाता उसी प्रकार इस नाई के सामने किसी पर्दे की आवश्यकता नहीं है। पर यह बात नहीं थी। किशन जानता था कि यह नाई अपना ही आदमी है, उसके मन मे इसके लिये कोई लिहाज़ बिल्कुल नहीं था। वह तो अपने नाटक के लिये वातावरण तैयार कर रहा था। जंगबहादुर बोला—बोलो न जो कुछ बोलना हो।

इसके उत्तर में किशन ने केवल ज़ोर से एक बार हुज़ूर कहा, और फिर चुप हो गया। जंगबहादुर नाई को हटाकर पागल की तरह खड़ा हो गया, और उसने जाकर एकदम से किशन का गला पकड़ लिया। बोला—बोलता क्यों नहीं। क्या वह मर गयी।

किशन ने गला पकड़ने का कोई भी प्रतिरोध नहीं किया। उसे जंगबहादुर से कोई डर नहीं था। वह जानता था कि यदि जंगबहादुर ने उसे मारा पीटा तो वह उससे फायदा ही उठा लेगा। उसने कूएं के अन्दर से बोलने के स्वर मे कहा—"नहीं हजूर, वह मरी नहीं, पर........"

जंगबहादुर ने उसके गले को ज़ोर से पकड़ लिया। बोला—"पर के बच्चे। बोलता क्यों नहीं ? मरी नहीं तो क्या हुआ ? वह आई क्यों नहीं ?"

नाई, जंगबहादुर के विषय मे सुन चुका था क्योंकि इस होटल मे जंगबहादुर एक किम्वदन्ती का व्यक्ति हो चुका था। वह डरा कि कहीं किशन का गला छोड़कर जंगबहादुर उसका गला न पकड़ ले। वह सावधानी से अपने औज़ारों को बटोरने लगा, साथ ही उसकी एक आँख दरवाज़े की तरफ लगी रही कि कोई ऐसा मौका पड़े तो फौरन बाहर निकल जाय।

किशन ने कहा—हजूर गला तो छोड़िये, न तो वह मरी है, और न वह भाग गई है। वह यहीं है......"

जंगबहादुर ने उसका गला छोड़ दिया, और बोला—"फिर आती क्यों नहीं।"

किशन ने कहा—"हुजूर आयेगी क्यों नहीं, पर बात तो सुन लीजिये"—कहकर उसने जंगबहादुर को नाई के सामने बैठ जाने का प्रार्थनामूलक इशारा किया, और जब जंगबहादुर बैठ गया, तो बोला—"हजूर बात यह है कि उस बार जब आप चले गये, तो कई दिनों तक उसने खाना नहीं खाया। समझाने बुझाने पर खाना खाने को तैयार हो गई, पर तब से उसने (यहाँ पर उसने एक इंगित किया) किसी मर्द बच्चे के पास आने से इन्कार किया। जब आप को गये पन्द्रह दिन हो गये, तो वह बहुत शराब पीने लगी। सैकड़ों का बिल हो गया। दो चार दिन से मैनेजर ने (यहाँ पर उसने चारों तरफ देख लिया मानों कोई गूढ़ बात कह रहा हो) उसको खाना भी भेजना बन्द कर दिया। उसका नाम होटल के रजिस्टर से काट भी दिया गया। उस पर मुकदमे की भी तैयारी है।"

नाई, डरते-डरते अपना काम कर रहा था। उसे तो मालूम था कि मनोरमा रोज़ होटल मे आती है, और ये सारी बातें मन-गढ़न्त हैं। वह समझ गया कि इस प्रकार की बात बनाकर कहने का कोई उद्देश्य होगा। बोला—"हजूर मैं कल उस तरफ से जा रहा था तो मालूम हुआ कि मनोरमा बिस्तरे पर से उठती ही नहीं।"

हजामत का काम खतम हो गया। नाई ने चाहा कि शैम्पू भी करे, पर जंगबहादुर अधैर्य के साथ उठता हुआ बोला—"क्या नाम है उस मैनेजर का, बड़ा दुष्ट मालूम होता है।"

किशन ने कहा—"नेमीचन्द। मैं अभी उन्हे बुलाये लाता हूँ" ..कहकर दरवाजे की तरफ बढ़ा।

पर जंगबहादुर स्वयं नेमीचन्द के कमरे में पहुँचा। नेमीचन्द

दूर से ही उसे देखकर घबड़ाया, और अनिश्चित रूप से कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया। किशन को ज़रा सा मौका मिल गया, उसने नेमीचन्द को एक लम्बी आँख मार दी। इससे नेमीचन्द को कुछ ढाढ़स बंधा। बोला—"आइये हजूर।"

जंगबहादुर ने मानो इस बात को सुना हो नहीं, बोला—"अभी उस लड़की को बुलवाओ। तुमने सुना है कि उसके साथ बड़ी ज्यादती की है।"

नेमीचन्द कुछ कह भी नहीं पाया कि किशन बीच मे बोल उठा—"हजूर ने मुझे हुक्म दे दिया कि मनोरमा का सारा हिसाब हजूर के नाम लिख दिया जाय। हजूर के लिये यह रकम कोई बड़ी नहीं है।"

नेमीचन्द बोला—"हजूर बात यह है कि मनोरमा को ७३७ रुपये तक हमने उधार दिये। फिर तो मेरे वश का नहीं था। अगर आप हुक्म दे जाते तो सात सौ क्या सात हज़ार भी दे देते। अपने पास न होता तो किसी से उधार माँगते। अपने राम तो फक्कड़ हैं। पर आपकी तरह दो चार रईसों का हमारे सिर पर दस्ते शिफ़कत है, हें हें हे हें।"

जंगबहादुर बोला—"तुम्हें मुझे खबर करनी चाहिये थी। मैं तो उसे साथ ले जाने के लिये तैयार था। वही नहीं गई। जो कुछ भी हो हिसाब होता रहेगा तुम उसे बुलवाओ।"

कहकर वह बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किये अपने कमरे में चला गया। नेमीचन्द उसे जितना ही नीच मालूम हो रहा था, मनोरमा उसे उतनी ही उच्च मालूम हो रही थी। उसने मन में कहा पंक में कमल। वह गुसलखाने जाकर नहाने लगा, और बार-बार कहता रहा पंक में कमल। जीवन में उससे किसी ने प्यार नहीं किया था। ल्यूकोडरमा के कारण उससे सभी घृणा करते थे,

यद्यपि उसके पास धन की तथा विलासिता के अन्य साधनों की कोई कमी नहीं थी। जब से किशन ने आकर सारी बात बताई थी, तब से उसका मन हिलोरें लेने लगा था। रक्त मे जैसे एक नया स्पंदन होने लगा था। उसने गुसलखाने में शीशे की तरफ देखा तो उसे मालूम हुआ कि अरे वह तो रो रहा था।

मनोरमा यथासमय आई। जंगबहादुर ने उसका जैसे स्वागत किया, यह कल्पनीय है। थोड़ी देर बाद होटल के अन्दर कहीं नाई से और किशन से साबका हुआ। नाई बोला—"दोस्त तुमने बड़े ज़ोर का हाथ मारा। कितना मारा यह तो बताओ।"

किशन ने अप्रसन्न होकर मुँह घुमा लिया। बोला—"यहाँ क्या है, मारा होगा तो नेमीचन्द ने मारा होगा।" यहाँ तो वही है कि "चेरि छोड़ि नहिं होउब रानी।"

"...अरे यार किसी और से उड़ना। कहीं मैं उस वक्त कह देता कि मनोरमा तो रोज़ होटल में आती है तो बचा फिर कोढ़ी मेरे ही रेज़र से तुम्हारा गला काट देता।"

" ..अरे यह तो सब चलता रहता है .कहकर किशन ने चाहा कि वहाँ से चल दे, पर नाई ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोला— यारों से ऐसी बेरुखी से क्यों बोलते हो? मुँह मीठा न कराओ तो कड़ुवा तो कराओ..." कहकर उसने अर्थपूर्ण ढंग से किशन को आँख मारी।

किशन समझ गया कि इससे छुटकारा मुश्किल है, फिर नाई किशन की बहुत-सी पोलें जानता था, बोला—"यह बात है। साफ-साफ कहो कि बीयर पीना है, चलो आधा गिलास पिला देते हैं। समझूँगा कि दोस्त पर एक टिप कुर्बान कर दिया। कहोगे कि किसी रईस से पाला पड़ा है।"

नाई बोला —"आधा गिलास नहीं, एक पूरी बोतल पीऊँगा, और सो भी देशी नहीं, डच। समझे?"

: १६ :

नेमीचन्द को पता था कि ऊपर के कोने वाले कमरे में जो जोड़ी ठहरी हुई है, वे अपने को पति-पत्नी बताने पर भी पति-पत्नी नहीं हैं। इस सम्बन्ध में उसे इतना निश्चय था कि वह अपने को निर्भ्रान्त समझता था, पर उसे इस बात से क्या मतलब था। यदि वकील यह देखने लगे कि उसका मुवक्किल सचमुच दोषी है या नहीं, यदि डाक्टर यह सोचने लगे कि उसका रोगी अपने ही दुष्कृत्यों का फल पा रहा है, या होटलवाला यह सोचने लगे कि जो व्यक्ति ठहरे हुए है वे धर्म करने आये है या अधर्म, तो बस हो चुका। नेमीचन्द इस प्रकार के अपने लिये अवान्तर कुसंस्कारों से बहुत पहले ही मुक्ति पा चुका था। बस वह इतना ख्याल रखता था कि कोई पुलिसवाला मामला न हो जाय। बाकी जो कुछ भी करे, वह उसका काम है, वह जाने और उसका काम जाने। उसे न तो ऊधो का लेना था और न माधो का देना था।

फिर भी वह सर्वदा सतर्क दृष्टि रखता था। यह काम ही ऐसा था कि ज़रा सा चूके और पाताल मे पहुँचे। यों तो उसने पुलिस-वालों को मिला रक्खा था, पर वह तजर्बे से जानता था कि पुलिस-वाले एक ही अपनी माँ के खसम होते है। कोई भी मामला फँसेगा तो सारी दोस्ती भुलाकर फौरन लम्बा-सा हाथ पसारेंगे। अगर न दो तो बड़े घर की सैर करो।

ऊपर के कोने वाले कमरे के उस व्यक्ति ने अपना नाम राजेन्द्र बतलाया था। नेमीचन्द को पूरा विश्वास था कि यह नाम भी बनावटी है, पर उसे क्या करना था। उसने पुलिस वालों को रजिस्टर दिखला दिया था, और खुद ध्यान से राजेन्द्र की स्त्री को

देख लिया था कि यह कोई नाबालिग नहीं है, बाकी बातों के लिये वह तैयार था। यदि राजेन्द्र ने या जो भी उसका नाम हो, इस लड़की को भगाया है, तो यह तो साफ है कि वह अपनी राज़ी से भागी है, फिर नेमीचन्द को क्या लेना है।

वे समय से बिल चुका देते थे। किसी तरह का और कोई झंझट नहीं था। झंझट से नेमीचन्द का मतलब यह था कि कोई सन्देह-जनक व्यक्ति आता जाता नहीं था। बहुत दिन पहले की बात है, तब नेमीचन्द को इतना तजर्बा नही था। इसी तरह एक पति-पत्नी, आकर ठहरे। कोई बात नहीं। बिल्कुल शरीफ मालूम होते थे। पर उनके यहाँ दोस्त बहुत आते थे। संध्या के समय से दोस्तों के आने का ताँता लगता था। खाना-पीना तो चलता ही था, शराब भी चलती थी। कोई बात नहीं, यह तो आधुनिक सभ्यता है। पर एक दिन रात को पुलिसवाले आ धमके। उस स्त्री को गिरफ्तार कर ले गये, मालूम हुआ कि उस कमरे मे तो बाकायदा वेश्यावृत्ति होती थी। नेमीचन्द भी गिरफ्तार होते होते बचा। मुकदमे मे होटल का नाम न आवे, इसलिये नेमीचन्द को काफी दौड़-धूप करनी पड़ी। साल भर की कमायी निकल गई। तब से नेमीचन्द इस मामले मे बहुत होशियार रहता था।

पर राजेन्द्र में यह बात नही थी। जब उसने ऊपर के कोने-वाले कमरे को पसन्द किया था तब नेमीचन्द के मन मे संदेह जरूर हुआ था, पर बाद के व्यवहार से वह संदेह दूर हो गया था। राजेन्द्र होटल से बहुत कम बाहर जाता था, और वह स्त्री तो जिस दिन आयी, उस दिन से कभी बाहर निकली ही नहीं।

नेमीचंद को यह भी मालूम था कि वह स्त्री गर्भवती है, पहले तो यह नहीं मालूम हुआ था, पर जब वे तीन महीने रह चुके, तब एक दिन नेमीचंद ने एकाएक उस स्त्री को देख लिया, और वह ताड़

गया। बाद को लेडी डाक्टर से भी इस बात का समर्थन हुआ था। राजेन्द्र यदा-कदा एक लेडी डाक्टर को बुला लाता था। यह लेडी डाक्टर पास ही मे रहती थी, और नेमीचन्द की परिचिता थी।

इससे नेमीचंद को एक नई फिक्र पैदा हुई। वह अपने मन मे तो यह निश्चय कर ही चुका था कि यह जोड़ी पति-पत्नी नहीं है। इसलिये स्त्री के गर्भवती होने की खबर से उसे यह फिक्र पैदा हुई कि कहीं ये लोग गर्भ गिराने की तदबीर तो नहीं करने वाले है। एक बात थी जो इस संदेह के विरुद्ध जाती थी, वह यह कि यदि इन्हे ऐसा करना होता, तो वे बहुत पहले ही ऐसा करते। जितने ही दिन जा रहे थे, यह काम उतने ही अधिक जोखिम का होता जा रहा था। पर क्या पता ? शायद मौका न लग पा रहा हो। और यह लेडी डाक्टर इन दिनों बार-बार क्यों आती है। यह डाक्टर भी बड़ी हज़रत होती हैं। कहीं वह वही बात तो नहीं कर रही है। उसे बड़ा बुरा मालूम हुआ, इसलिये नहीं कि उसके विवेक को कोई चोट लगी, बल्कि इसलिये कि यदि ये लोग वह काम कर ही रहे है; तो उसे क्यों नहीं बताया जाता जिससे कि वह जान तो जाता कि क्या हो रहा है। अवश्य सूखे ज्ञान मे उसे कोई दिलचस्पी नहीं थी। एक तो उसे अपने होटल को बचाना था और दूसरा मौका लगे तो कुछ बड़ी-सी रकम ऐंठना था। यह बात तो ठीक नहीं कि उसी के होटल मे इतना बड़ा काम हो, और उसके पल्ले कुछ भी न पड़े। इन्हीं बातों को सोचकर वह बहुत चौकन्ना रहता था। सरजू से भी उसने कह रक्खा था कि कोई भी खास बात हो तो वह उसे बतावे। भंगी को भी हिदायत थी कि कोई सन्देह-जनक बात हो तो बता दे।

पर कहीं कुछ पता नहीं लगता था। एक दिन राजेन्द्र बिल देने आया, तो नेमीचन्द ने अपने चेहरे को अधिक से अधिक प्रफु-

ल्लित बनाते हुए कहा—अब तो आपको चाहिये जी हे हे हे हे... अपनी पत्नी को अस्पताल भेज दें। सब मेरी जान पहचान के हैं। कोई कष्ट नहीं होगा, और पैसे भी कम लगेंगे।

राजेन्द्र नेमीचन्द से इस बात को सुनने की आशा नहीं करता था। उसका चिन्ताग्रस्त चेहरा और भी चिन्ताग्रस्त हो गया। यद्यपि वह अभी तरुण था, पर उसके माथे पर कुछ झुर्रियाँ आ गयी थीं। वे स्पष्ट हो गईं। उसकी आँखें बाहर की तरफ निकल-सी आईं। अन्यमनस्क सा होकर बोला—"नहीं नहीं अस्पताल क्यों ? ऐसी कोई बात नहीं है। वह तो बिल्कुल तन्दुरुस्त है। कोई बीमारी नहीं है।"

नेमीचन्द ने देखा कि यह यों कब्जे में नहीं आयेगा, बेकार में उड़ रहा है। चारों तरफ देखकर मानो वह कोई बहुत ही गुप्त बात कह रहा है आवाज़ धीमी करते हुए बोला—"पुलिसवाले पूछ रहे थे।"

राजेन्द्र अब तक खड़े-ही-खड़े बात कर रहा था, वह अब धम से एक कुर्सी पर बैठ गया। खोई-खोई-सी आँखों से ज़मीन की तरफ देखते हुए, फिर मुश्किल से नेमीचन्द की आँखों से आँख मिलाते हुए बोला—"पुलिसवाले पूछ रहे थे, क्या पूछ रहे थे।"

नेमीचंद समझ गया कि शिकार कब्जे में आ गया है। बोला—"वे बहुत कुछ पूछ रहे थे, बस मैंने आपको सावधान कर दिया। होटल में भी पुलिस के गुप्तचर हैं, मैंने बहुत कोशिश की कि जानूं कि हमारे कौन से लोग पुलिस को खबर देते हैं, पर कुछ पता नहीं चलता।"

राजेन्द्र एकाएक बोला—"यह सरजू कैसा है ?"

"...सरजू तो अच्छा है, पर क्या भरोसा ?"

राजेन्द्र बिना कुछ बोले ही लड़खड़ाता हुआ उठा, और चला

गया। जब वह नेमीचन्द के दफ्तर के चौखट पर पहुँच गया, तो नेमीचन्द बोला—"कोई बात हो तो मुझे बताइयेगा। मैं हर तरीके से आपकी मदद के लिए तैयार हूँ।"

राजेन्द्र जैसे एक क्षण के लिये ठिठककर खड़ा हो गया, फिर उसने नेमीचन्द की ओर देखा और कमरे से निकल गया। शायद वह यह समझता था कि वह सबकी सहायताओं के परे है। कोई उसे सहायता नहीं दे सकता।

: १७ :

अपने दरवाज़े पर ज़ोर की भड़भड़ाहट सुनकर तारा नींद से जग गई। बोली..."कौन ?".. कहकर उसने दरवाज़े से कान लगाया। उधर से किशन ने कहा—"खोलो, मैं हूँ।"

तारा ने यंत्रचालित की तरह घड़ी की तरफ़ देखा तो उसे मालूम हुआ कि अभी केवल आध घंटा पहले ही वह सो गई थी। उसने दरवाज़ा खोल दिया और किशन एक बड़ा-सा टिफ़िन कैरियर तथा एक बोतल लेकर कमरे में दाखिल हुआ। फिर उसने खुद ही दरवाज़ा बन्द कर दिया। बोला—"तुम इतनी जल्दी सो जाओगी यह उम्मीद नहीं थी। होटल में तो रात भर जगती थी।"

तारा ने इस उल्लेख को पसन्द नहीं किया। बोली—"वह और बात थी। अब तो दिन में नहीं सोती।"

किशन ने तारा की छोटी-सी आलमारी से प्लेट आदि निकाले, और टिफ़िन कैरियर खोलकर खाना लगाने लगा। उसने इस काम को उतनी ही सावधानी और सुरुचि के साथ किया जैसा वह होटल में खास-खास लोगों के साथ करता था। तारा ने मना किया, बोली—"रहने दो, मैं लगा लूँगी। बहुत रात हो गई। तुम अभी बैठोगे ?"

काम जारी रखते हुए किशन ने कहा—"क्या हुआ ? रोज़ कितनों का खाना लगाता हूँ जिनसे कोई लेना न देना। अगर तुम्हारा खाना लगा दूँगा तो कोई छोटा नहीं हो जाऊँगा। यह देखो क्या-क्या चीज़ लाया हूँ। और यह बोतल असली ह्विस्की है।"

तारा तो भूखी थी ही, कमरे में खाने की सुगन्धि फैली, तो वह तो विभोर हो गयी। जब खाना लग चुका और किशन ने कॉच के गिलासों मे ह्विस्की डाली, तो तारा ने कहा—"तुमने खाया तो न होगा ?"

किशन ने कहा—"मैं खा चुका हूँ, तुम खाओ। मैं तो सिर्फ पीऊँगा।" ..कहकर उसने एक गिलास उठा लिया।

तारा खाने लगी। वह ज्यों-ज्यों खाने लगी त्यों-त्यों उसके चेहरे पर की उदासी दूर हो गयी। किशन अच्छी-से-अच्छी चीज़ लाया था। किशन उसे कनखियों से घूरता रहा।

जब तारा कुछ खाना खा चुकी तो उसने देखा कि किशन बैठा है। पी नही रहा है। तारा बोली—"तुम पीओ न ?"

किशन बोला—"तुम भी पीओ न। मै तुम्हारे बगैर कैसे पी सकता हूँ।"

.."मुँह से"...कहकर तारा खिलखिला कर हँसी।

किशन उसे बहुत ध्यान से देख रहा था। उसके चेहरे पर क्रमशः एक परिभाषा-हीन अजीब उदासी आ रही थी। तारा को कुछ देर बाद यह बुरा मालूम हुआ कि वह तो खा रही है, और उसके सामने किशन बैठे-बैठे समय काट रहा है। उसका हृदय कुछ पसीज-सा गया, और यद्यपि वह खाने के बाद ही पीना पसद करती थी, फिर भी उसने अपना गिलास उठा लिया, और किशन के गिलास के साथ उसे क्लिन्क करके एक घूँट पीया। किशन ने गिलास क्लिन्क करते हुए अभी-अभी हाल में आये हुए होटल के निवासी की तरह धीरे से कहा था. .सौन्दर्य की रानी को . पर शायद तारा ने इसे सुना नहीं था, या सुना भी हो तो उसने उसका कोई उत्तर नहीं दिया।

तारा खाती गयी, और क्रिशन पीता गया। थोड़ी देर मे खाना

खतम हो गया, और तारा ने भी पीना शुरू किया। बार-बार गिलासों को क्लिन्क किया जाने लगा। किशन हर बार मंत्र की तरह 'सौंदर्य की रानी' को कहता था, और प्रतिबार उसकी आवाज़ पहले से तेज़ होती गई। तारा इसे सुनकर भी अनसुनी करती गई। वह कुछ और ही सोच रही थी। वह सोच रही थी कि आज जो खाना उसे मिला, और जिसे उसने इतना पसन्द किया, वह तो उसे रोज़ मिला करता था। हाय, क्या वह दिन फिर लौट आयेगा। बोली—"तुमने मेरे होटल जाने के बाबत क्या तय किया ?" ..कहकर वह और पीने लगी।

यहाँ तक कि डेढ़ घंटे के अन्दर दोनों ने सारी शराब पी डाली। दोनों पीने के आदी थे। फिर भी उनके लिए भी कुछ कम न था। किशन ने बात-बात मे तारा को आश्वासन दिया कि वह कोई चिन्ता न करे, वह सारा काम ठीक कर लेगा। तारा को यह आश्वासन कुछ फीका जंचा, बोली—"कल ही क्यों न चले।"

..."वह कल देखा जायेगा। अब तो दूसरी बाते करो।"

तारा बोली—"क्या बताऊँ किशन उन लड़कियो ने मुझे कितना धोखा दिया कि खुद तो लौट गयी और मुझे इसमें फँसा दिया। तुमने भी तो मुझे चेतावनी नही दी कि ये ऐसी है।"

..."क्या बताऊँ, मैं यह थोड़े ही जानता था कि ये दिल की इतनी कच्ची है। पर एक बात है तारा जो भी कहो"...कहकर वह अपने स्थान से उठा और एकाएक तारा से लिपटता हुआ बोला—"पर मैं तो तुम्हे कभी धोखा नहीं दे सकता।"

तारा बोली—"मैं यह कब कहती हूँ"...कहकर उसने किशन से अपने को छुड़ाने का प्रयत्न किया, पर किशन उससे और अधिक चिपट गया और रुआँसा होकर बोला—"तुम सच जानो तारा मैं तुमसे कितना प्यार करता हूँ। तुम्हारे कहने पर मैं नेमीचन्द या

जिसका भी बताओ सिर काट सकता हूँ। मै कभी तुम्हे धोखा नहीं दे सकता।"...कहकर उसने तारा का मुँह चूमना शुरू किया। तारा किसी तरह से अपने को छुड़ाकर दूर हट गयी। वह इस बात के लिये तैयार नहीं थी। न मालूम क्या बात है किशन से उसे शारीरिक रूप से घृणा मालूम होती थी। पर किशन आकर फिर उससे लिपट गया। वह बहुत व्याकुलता के साथ बार-बार यही कहने लगा कि मैं तुम्हे धोखा नहीं दे सकता, मै तुम्हे धोखा नहीं दे सकता। उधर तारा भी यही कहती रही "मुझे छोड़ो मैंने कब कहा कि तुम मुझे धोखा दे रहे हो।"

पर किशन ने उसको नहीं छोड़ा। चुम्बनों से उसने उसके सारे विरोध को मौन कर दिया। यद्यपि तारा के लिये इस प्रकार पुरुष-संग करना कोई नई बात नहीं थी, पर उसे यह पहली बार ऐसा मालूम हुआ कि उस पर बलात्कार हुआ। फिर भी ऐसी मजबूरियाँ थी कि मामूली प्रतिवाद करने के अतिरिक्त वह न तो चिल्ला सकी और न कुछ कर सकी। सहजात बुद्धि से वह यह समझती थी कि यदि वह चिल्लायी तो इससे उसको कुछ लाभ नहीं पहुँचेगा।

जब थोड़ी देर बाद किशन उससे अलग हुआ, तो उसने उसे बहुत भला-बुरा कहा। पर किशन उत्तर में कुछ बोला नहीं। वह समझता था कि उसकी इतनी बड़ी विजय हो चुकी है कि मामूली गालियों से उसका कुछ आता जाता नहीं था। जब तारा उसे विश्वासघातक और क्या, क्या, कह रही थी, उस समय वह मन ही मन यह सोच रहा था, कि यह तो हुआ, अब आगे क्या हो। गत कई सालों से वह तारा के पीछे पड़ा हुआ था, इसी कारण उसे ज़िद चढ़ गयी थी, और कोई बात नहीं। अब उसकी इच्छा-पूर्ण हो चुकी थी। किशन अपने ढंग से दार्शनिक था, और उसने

देखा कि यह स्त्री भी अन्य स्त्रियों की तरह है, इसमें कोई खास बात नहीं है। अब यदि वह उससे भविष्य में कभी न मिलता, तो भी कोई हर्ज नहीं था। तो क्या वह तारा के मामले को यहीं छोड़ दे ? नहीं, जब वह इतने दूर तक आ चुका है तब वह उससे कुछ काम भी बनायेगा।

तारा गालियाँ देती चली जा रही थी। अन्त में ऊबकर किशन ने कहा—"तुम नाहक को परेशान हो रही हो।"

कहकर वह टिफिन कैरियर उठाकर दरवाजा खोलकर रात के अँधेरे में विलीन हो गया।

: १८ :

जंगबहादुर अबकी बार पूरे एक महीने तक टिका। बीच मे बम्बई से बहुत ज़रूरी बुलावा आया, जंगबहादुर हवाई जहाज़ से गया और हवाई जहाज़ से ही लौट आया। मनोरमा अब सिवा उसके और किसी के पास नही जाती थी। इस कारण नेमीचन्द के सामने एक समस्या आ गई थी, पर जल्दी ही न मालूम वह कहाँ से दो उसी उम्र की सुन्दरी लड़कियों को ले आया, और इस प्रकार उसकी क्षतिपूर्ति हो गयी।

जगबहादुर इतने दिनों तक यहाँ ज़बर्दस्ती रुका था। नही तो उसकी कोठी मे उसकी बहुत आवश्यकता थी, पर वह मनोरमा मे इतना लीन था कि जब तार पर तार आने लगे, और उसने समझ लिया कि अब रुकने से व्यापार मे घाटा होगा, तब वह होटल छोड़ने के लिये तैयार हो गया। जाते समय वह सब को आशा से अधिक बख्शीश देता गया।

जिस दिन जंगबहादुर गया, उस दिन संध्या समय मनोरमा होटल मे नहीं आयी। लोगों ने इसे बिल्कुल स्वाभाविक समझ लिया, क्योंकि यद्यपि उससे यह आशा नहीं की जाती थी कि वह जंगबहादुर के लिये कोई विशेष शोक करेगी, फिर भी इतने दिनों तक एक आदमी के साथ लगे रहने के बाद वह कम-से-कम एक शाम अपने पैरो से बाज़ आयेगी, ऐसी आशा की जाती थी। पर जब वह अगले दिन भी नहीं आई, और फिर उसके अगले दिन भी नहीं आई, तब लोगों का माथा ठनका। नेमीचन्द ने किशन से बुलाकर पूछा—"यह क्या बात है जी, मनोरमा नहीं आई?"

..कहकर हँसता हुआ बोला—"जाकर देख आओ कि कहीं उसने उस कोढ़ी के विरह में खुदकुशी तो नहीं कर ली।"

किशन बोला—"हजूर खुदकुशी करने में बड़ा दिल चाहिये। इन दिनों उसने खूब कमाया है, इसलिये बैठकर खा रही होगी। जब गरज पड़ेगी तो वह खुद आयेगी।"

नेमीचन्द बोला—"हाँ इन दिनों तो उसका दिमाग बहुत चढ़ा हुआ था। हम लोगों से वह बात ही कब करती थी। फिर भी तुम जाकर देख आओ कि क्या मामला है। गो कि मैं दो लड़कियों को ले आया हूँ, पर ये उतने काम की नहीं साबित हो रही है। तारा गई, अब मनोरमा जाय, यह मैं नहीं चाहता।"

किशन उस दिन तो नहीं अगले दिन मनोरमा के निवास-स्थान पर पहुँचा। पर वहाँ तो उसका कहीं पता नहीं था। लोगों से पूछने पर पता लगा कि मनोरमा अपना सारा सामान लेकर एक टैक्सी में बैठ कर चली गयी। किशन ने हिसाब मिला कर देखा तो जिस दिन जंगबहादुर होटल से गया था, उसी दिन मनोरमा भी चली गई थी। किशन को समझने मे देर नहीं लगी कि जंगबहादुर मनोरमा को ले गया है।

इस खबर से उसके मन मे एक अजीब भावना उत्पन्न हुई। वह सोचने लगा कि सब धीरे-धीरे चले जा रहे हैं, बस वही एक ऐसा है जो टिका हुआ है। पर उसने इस दुःख को दार्शनिक रूप से लिया। होटल मे पहुँचकर उसने खाली कमरे में एक बोतल से दो तीन पेग चढ़ाये और फिर अपने काम पर जुट गया। उस समय नेमीचन्द होटल मे नहीं था। जब वह आया तो उसने नेमीचन्द को असली बात न मालूम क्यों नहीं बतायी। उसने अपने से तो इस विषय मे कुछ कहा ही नहीं, और जब पूछा गया तो बोला—"हजूर मौका नहीं लगा, किसी वक्त चला जाऊँगा"

उस दिन के लिये बात वहीं पर खतम हुई। पर नेमीचन्द

उससे रोज़ पूछता रहा। अन्त में किशन को सत्य बात बतानी ही पड़ी। सुनकर नेमीचन्द बोला—"ये औरतें भी कितनी अजीब हैं। पहले तो वह उस कोढ़ी के पास जाना नहीं चाहती थी, और जब गयी तो उसके साथ चली गयी। . कहकर वह थोड़ी देर रुका, और फिर जैसे कुछ सोच कर बोला—और यह जंगबहादुर भी कितना बेईमान निकला कि बिना कुछ कहे सुने उस लड़की को भगा ले गया।"

किशन कुछ क्षण तक तो चुपचाप रहा, फिर बोला—"हजूर यह तो उस लड़की की खुशकिस्मती है। सैकड़ों लड़कियाँ उसके साथ भागने को तैयार हो जायेंगी।"

नेमीचन्द किशन से ऐसे उत्तर की आशा नहीं करता था। बोला—"भागी तो भागी, पर वह कोई आदमी भी तो होता। एक तो अधेड़, और तिस पर कोढ़ी ..।"

किशन न मालूम किस प्रकार की मानसिक अवस्था में था, बोला—"हजूर जिसके पास रुपये है, उसके सब जुर्म माफ़ हैं।"

नेमीचन्द को इसके उत्तर मे यह कहते शर्म न आयी... "औरतें बस रुपया ही देखती है, और कुछ नहीं।"

नेमीचन्द भले ही न समझ पाया, पर किशन मन-ही-मन हँसा। वह कुछ बोलना चाहता था, शब्द जीभ पर आ भी गये थे, पर उसने वाक्संयम से काम लिया, और कुछ न कहा। उसके मुँह के अन्दर से निगलने की सी एक आवाज़ मात्र हुई!

: १६ :

नेमीचन्द ने बहुत चेष्टा की कि मनोरमा के गायब हो जाने की बात अन्य लड़कियों को पता न लगे। किशन को इस सम्बन्ध में सख्त हिदायत कर दी गयी, फिर भी न मालूम कैसे यह खबर सारे होटल के खानसामों और लड़कियों में फैल गयी।

अभी लोगों में इस घटना की चचा बन्द नहीं हुई थी कि होटल में एक और घटना हो गई। ऊपर के कोने वाले कमरे में जो राजेन्द्र तथा उसकी बीबी ठहरी हुई थी, वहाँ एक दिन बड़े ज़ोर का रोना उठा। खैरियत यह थी कि दोपहर का समय था, और होटल करीब-करीब खाली था। लोग खाना खाकर अपने-अपने काम से चले गये थे। जो लोग कहीं गये नहीं वे कमरा बंद कर सो रहे थे। नेमीचन्द दोपहर का हिसाब मिला रहा था, इतने में यह रोना सुनायी पड़ा। वह कैशबाक्स बंदकर सीधा ऊपर की मंज़िल में पहुँचा। वह काफी घबड़ाया हुआ था। उसने सोचा कि कहीं कोई कत्ल तो नहीं हो गया।

पहले तो उसने राजेन्द्र की बीबी को (जिसे वह एक दिन के लिये भी राजेन्द्र की बीबी नहीं समझता था) चुप कराया। राजेन्द्र का कहीं पता नहीं था। पूछने पर मालूम हुआ कि राजेन्द्र दो दिन से गायब था, इसी कारण वह स्त्री रो रही थी। नेमीचंद ने किशन के अलावा बाकी सबको वहाँ से चले जाने के लिये कहा, और फिर उस स्त्री से बोला—"यह तो एक दिन होना ही था, फिर तुम रो क्यों रही हो?"

यह द्रष्टव्य था कि नेमीचंद ने उसे तड़ाक से तुम करके

सम्बोधित किया। वह सारी परिस्थिति समझ चुका था, और यह जानता था कि अब यह स्त्री सम्पूर्ण रूप से उसकी दया पर निर्भर है। वह स्त्री जो अब तक पर्दे वाली बनती थी, शायद अपनी परिस्थिति समझ गयी, और उसने भी इस 'तुम' को स्वीकार कर लिया। वह बहुत परेशान थी। एक तो वह आसन्नप्रसवा थी, और दूसरे राजेन्द्र के भाग जाने से बिल्कुल अपने को अथाह समुद्र में पा रही थी। जब नेमीचंद ने उससे कहा कि यह तो होना ही था; तो उसका सफेद पड़ा हुआ चेहरा और भी सफ़ेद पड़ गया। सहसा वह कुछ उत्तर न दे सकी।

नेमीचंद ने सारी परिस्थिति समझ ली, कम-से-कम वह यही समझ कर चलने लगा कि वह सब कुछ समझ चुका है। बोला—"अब तो नाटक खतम हो गया, अब यह बताओ कि तुम कौन हो, और राजेन्द्र नाम से जो आदमी था वह तुम्हारा कौन था?"

इसके उत्तर में वह लड़की फफक-फफक कर रोने लगी, और कुछ न बोल सकी पर नेमीचंद को उसके रोने पर कोई तरस नहीं आ रहा था। उसने पहले भी देखा था, और अब तो अच्छी तरह देख लिया कि वह लड़की सुन्दरी है, तारा से तो बढ़कर है ही, मनोरमा से भी कुछ बीस ही है। पढ़ी-लिखी और अच्छे खान-दान की मालूम होती है। यहाँ तक तो सब ठीक था। कोई ऐसी समस्या नहीं थी, पर जब उसने उसके पेट की तरफ देखा तो चिन्तित हो गया। बोला—"अब रोने-धोने से क्या होगा? जो कुछ हुआ सो तो हो गया, अब यह बताओ कि कहाँ जाओगी क्या करोगी?"

फिर भी उस लड़की ने कुछ नहीं कहा, और पहले से अधिक ज़ोर से फफक-फफक कर रोने लगी। नेमीचंद किसी बात से घब-ड़ाता नहीं था, पर वह इस रोने से घबड़ाता था क्योंकि उसे यह डर था कि कहीं कोई सुन ले तो कहीं कोई आफ़त न खड़ी हो

जाय। किशन नेमीचद की विपत्ति ताड़ गया। कुछ आगे बढ़ते हुए बोला—"हजूर यह ऐसे नहीं मानेगी, पुलिस बुलाकर इसे उसके सुपुर्द कर दिया जाय। वह आप निपट लेगी।"

पुलिस का नाम सुनकर वह लड़की चौंक पड़ी। बोली—"नहीं नहीं, मैं सब कुछ बताती हूँ। वह आदमी मेरा कोई नहीं था। उसने मुझ से शादी करने के लिये कहा था। मैं क्या जानती थी कि वह मुझे इस तरह छोड़कर चला जायेगा।"

कहकर वह पहले की तरह तो नहीं, पर धीरे-धीरे रोने लगी। नेमीचंद बोला—"अब क्या हो यह तो बताओ। वह तो चला गया, और यह भी साफ है कि तुम्हे दो-एक दिन में बचा होने वाला है। अब कहाँ जाओगी, क्या करोगी यह तो बताओ। इस तरह रोने से तो काम नहीं चलेगा। मेरा तो यह होटल है, धर्मशाला नहीं। मेरे ख्याल से सौ का बिल तो होगा ही। ऐसी हालत मे मैं तुम्हे कसे रख सकता हूँ। और होटल मे तुम्हारे ऐसे लोगों का काम ही क्या है?"

किशन ने खोदकर सारी बात पूछनी चाही, पर वह बड़ी कठिनता से केवल राजेन्द्र का असली नाम और पता पा सका।

नेमीचंद और किशन लौट गये। सरजू से कह गये कि इस पर अच्छी तरह निगरानी रखना। फिर दोनों गुपचुप बड़ी देर तक सलाह करते रहे। अन्त मे किशन फौरन जो पहली गाड़ी मिली उससे राजेन्द्र के शहर के लिये रवाना हो गया। केवल पचास मील की ही यात्रा थी। संध्या तक वह ढूँढ़-ढाँढ़कर राजेन्द्र के घर पहुँचा। देखा तो बड़ी अच्छी कोठी मालूम पड़ी। मकान के सामने जो नाम लिखा हुआ था वह कुछ दूसरा ही था। किशन ने अनुमान लगा लिया कि यह उसके बाप का नाम होगा। राजेन्द्र का जो नाम बताया गया था, उसका कहीं पता नहीं था।

फिर भी वह बड़ी ऐंठ से भीतर घुस गया, और सामने जो भी मिला, उससे बोला—"केदारनाथ बाबू है ?"

जिस व्यक्ति से यह बात पूछी गयी, वह बोला—"वे तो बीमार हैं, किसी से नहीं मिलते।"

किशन ने उसे डाँटकर कहा—"जाकर कह दे कि नेमीचन्द मिलने आये हैं। बहुत ज़रूरी काम है।"

वह व्यक्ति कुछ रोब मे आ गया, और भीतर चला गया। थोड़ी देर मे बुलावा आया, और किशन नौकर के साथ भीतर चला गया। किशन को देखते ही केदार नाथ का रहा सहा साहस भी जाता रहा। नेमीचंद का नाम सुनकर वह पहले ही अर्द्धमृत हो चुका था। नौकर को बाहर भेजकर केदारनाथ किशन से ऐसे मिला जैसे वह उसी की बराबरी का परम मित्र हो। किशन मन-ही-मन हँसा और जाकर केदारनाथ के पास ही एक सोफ़ेदार कुर्सी पर बैठ गया। वह केदारनाथ की घबड़ाहट का खूब उपभोग कर रहा था। बोला—"आप तो बड़े हज़रत निकले बाबू जी।"

केदारनाथ सहसा कुछ बोल न सका। बोला—"भई क्या करता, ऐसी ही परिस्थिति थी। मजबूरी से भागना पड़ा।"

..."मजबूरी से मैं भी आया हूँ। आप भाग तो आये, पर पुलिस को सब पता लग चुका है। भागते समय आपने होटल के बिल भी नहीं दिये, एक मुकद्दमा तो यह है। बाकी तो आप जानते ही है।" ..कहकर उसने एकाएक प्रसग को बदलते हुए कहा—"यह कोठी किस की है ? आपकी है न ? बड़ी अच्छी है, मुझे तो देखकर बड़ी खुशी हुई।"

केदारनाथ डरते-डरते बोला—"नहीं, यह कोठी मेरे अकेले की नहीं है। अभी तो पिताजी हैं, फिर कई भाई हैं।" . कहकर वह चुप हो गया क्योंकि पूछने की बहुत-सी बातें होने पर भी कहाँ से शुरू करे यह उसकी समझ मे नहीं आ रहा था।

किशन ने कहा—"बाबूजी आपने बड़ी भारी गलती की।" ..कहकर उसने उसके चेहरे की तरफ देखा, फिर बोला—"अब तो आप जेलखाने से बच नहीं सकते। ऐसी कौन-सी बात थी कि आप भाग आये। मुझे सारी बात बता देते, मैं सब ढंग लगा देता। कितनों का मैंने ढंग लगाया है।"...कहकर सहानुभूति के स्वर मे बोला—"जवानी मे किससे गलती नहीं होती? पर आप तो कानून की गिरफ्त मे आ गए।"

किशन जो चाहता था वही हुआ। केदारनाथ ने एकाएक आत्मसमर्पण के भाव से कहा—"भाई गलती हुई, अब तो तुम हमें किसी तरह इस मुसीबत से बचाओ।"

इसके उत्तर मे किशन ने एकाएक अभयदान नहीं दिया। उसे तो इसी पर सौदा करना था। फिर भी वह सारी परिस्थिति जान कर ही तब कुछ कहना चाहता था। बोला—"अब तो बहुत देर हो गई। बचाना तो मैं चाहता हूँ। तभी तो टैक्सी लेकर सरपट भागता हुआ आया, मैंने कहा गाँठ से कुछ जाय तो जाय पर एक शरीफ आदमी का भला तो हो। पर यह तो बताइये कि मामले की रिपोर्ट तो इधर से भी हुई होगी।"

"कौन सी रिपोर्ट?"

.."लड़की के बाप वगैरह ने रिपोर्ट तो पहले ही लिखा दी होगी। मेरे कहने का मतलब यह है कि मुकद्दमा तो चारों तरफ से तैयार होगा।"

..."नहीं, इधर से पुलिस में कोई रिपोर्ट नहीं है। जब लड़की के गर्भ रहने की बात घर में खुल गई, तो उस पर गाली-गुफ्ता किया गया, इस पर वह भागकर मेरे पास आयी। तब मैं उसे लेकर होटल पहुँचा। आगे सब जानते ही हो।"

किशन बोला—"तो अब आप क्या करना चाहते हैं? अगर

आप उससे शादी कर लें तो सारा मामला टल सकता है"... किशन ने ऐसा केवल उसे परखने के लिए कहा।

केदारनाथ बोला—"बस यही तो नहीं हो सकता। पिताजी इस पर कभी राज़ी नही होंगे। फिर वह हमारी जाति की नहीं है। हम लोग ठहरे ब्राह्मण, और वह है खत्री।"

किशन ने ऐसे सिर हिलाया जैसे सारी बातें उसकी समझ मे आ गई, बोला—"यह सब पहले नहीं सोचा था।"

..."सोचा क्यों नही था। यह कौन जानता था कि उसे इतना जल्दी गर्भ रह जायेगा और वह आकर मेरे सिर पर सवार हो जायेगी तुम जानते हो कि सारा काम मजबूरी में हुआ।"

किशन ने समझ लिया कि क्या परिस्थिति है। उसने भाँप लिया कि उसका काम खूब बनेगा। बोला—"बाब जी मुझे आप पहले ही सारी बात बता देते तो कोई-न-कोई तरकीब निकालता। पर अब तो कुछ हो नहीं सकता" . कहकर फिर जैसे एकाएक विचार आया, बोला—"बस एक ही तरकीब है कि या तो शादी करो या पुलिसवालों का मुँह घूस से बन्द कर दो। पर यह दूसरी तरकीब बहुत मुश्किल है। पुलिसवाले एक हज़ार से कम पर किसी तरह नही मानेंगे। मैं तो ऐसे कई केस करवा चुका हूँ। मुझे मालूम है।"

थोड़ी देर तक सन्नाटा रहा। केदारनाथ जैसे गंभीरता से कुछ सोचता रहा। फिर बोला—"भई इतने रुपये एक साथ कहाँ से लाऊँगा। कुछ कम में नहीं होगा?"

किशन बोला—"इससे सौ दो सौ ज्यादा ही लगेंगे। कम की कोई गुंजाइश नहीं है। पुलिसवालों के अलावा होटल के सब आदमियों को भी कुछ देना पड़ेगा क्योंकि बाद को यदि मुकद्दमा उभरा, तो सभी यह गवाही देंगे कि वह लड़की आपके साथ नहीं बल्कि किसी और ही पुरुष के साथ हमारे होटल में ठहरी थी।"

दोनों में देर तक मोलभाव होता रहा। अन्त में कुल मिलाकर दो किश्तों में ११०० रुपये पर सारा मामला तय हुआ। सात सौ तो उसने उसी रात को कहीं से मंगाकर दे दिया। बाकी चार सौ के लिये यह तय रहा कि किशन फिर आकर ले जायेगा। इस पर किशन ने अपनी टैक्सी का किराया मांगा। फिर इनाम इकराम। अगले दिन सवेरे रवाना होते समय वह केदारनाथ की आँख बचा कर उसके कमरे मे से चाँदी का एक शील्ड चुरा ले गया जो केदारनाथ को किसी खेल मे मिला था।"

जब किशन होटल मे पहुँचा, तो उसने नेमीचन्द से सारी परिस्थिति बता दी। हाँ रुपयों के बारे में उसने कहा—"साला बड़ा चट निकला। बहुत मोलभाव और रात भर डर दिखाने पर उसने केवल तीन सौ रुपये दिये।"

नेमीचन्द ने बहुत मुँह बनाया पर वह भी इस बीच मे कुछ बना चुका था। उसने उस स्त्री से होटल का सारे बिल का चौगुना वसूल कर लिया था। साथ ही उसने उसके गहने भी सुरक्षित रखने के बहाने ले लिये थे, जिन्हे वह जानता था कि उसे कभी लौटाना नहीं पड़ेगा। वह यह सुनकर बहुत खुश हुआ कि उधर पुलिस में रिपोर्ट नहीं है। न इधर रिपोर्ट है न उधर रिपोर्ट है। फिर तो जो उसके मन में है वह होकर रहेगा। यह समझकर उसने तीन सौ रुपये ले लिये, और किशन को राह खर्च के अलावा २५ रुपये दिये। किशन ने मन-ही-मन नेमीचन्द को बहुत गालियाँ दी, पर दुःखित होने की कोई बात नहीं थी। नकद चार सौ तो उसको मिल ही चुके थे। फिर टैक्सी के बहाने सौ और इनाम पचास। चार सौ मिलना बाकी था। और घाते में वह चाँदी का शील्ड भी हाथ लगा था।

अर्णवकुमार, यहाँ तक कि कन्हैयालाल के लिये होटल की सारी लीलाये मामूली हो चुकी थीं। अब वे उस तरफ कम ध्यान देते थे। पर ध्यान दें या न दें, समाज-शरीर के इस नासूर के प्रति उनका ध्यान निरन्तर आकृष्ट होता रहता था। होटल में काम करनेवाले मजदूरों अथवा कर्मचारियों की जो यूनियन बनाने की बात थो, वह भी खटाई में पड़ी हुई थी, क्योंकि उन्हें किसान मोर्चे पर ही इतना काम पड़ रहा था कि इधर ध्यान देने का मौका कम मिलता था। अक्सर उनका दफ़्तर बन्द रहता था और वे गाँवों में दौरे पर होते थे। फिर भी कभी-कभी वे यहाँ आते थे क्योंकि किसानों के प्रतिनिधियों से एक-साथ मिलने का मौका शहर मे ही लगता था।

जब वे आते तो फ़ुर्सत में होटल के सम्बन्ध में कुछ बातचीत अवश्य करते थे। कन्हैयालाल आता तो सरजू से कुछ-न-कुछ बात ज़रूर करता। उसका कौतूहल एक तरुण का कौतूहल था। उसमें राजनीति कहाँ तक थी, पता नहीं, पर तरुण-सुलभ कौतूहल था इसमे सन्देह नहीं। पर कौतूहल की भी मात्रा पहले के मुकाबले में कम हो गई थी। अब वे बत्ती बुझाकर घंटों उधर के कमरों की तरफ आँख लगाये नहीं रहते थे। अवश्य उनकी बत्ती जलने से कभी-कभी होटल के लोगों को अपने काम मे बाधा पड़ती थी। वे दरवाज़ा बन्द कर लेते थे, पर ये किसान सभा के कार्यकर्त्ता किसी की परवाह नहीं करते थे।

नेमीचन्द के नेतृत्व में होटलवालों ने इन दोनों कार्यकर्त्ताओं पर उन सारी चालाकियों का प्रयोग कर लिया था, जिनके द्वारा

वे इस मकान के दूसरे किरायादारों को निकाल बाहर करने में समर्थ हुये थे, पर इनके विरुद्ध वे सारी कारसाजियाँ व्यर्थ सिद्ध हुई थीं। जब ये चालाकियाँ व्यर्थ गईं, और नेमीचन्द ने देखा कि होटल मे आने वाले लोगों को इनके मारे दरवाजा बन्द कर लेना पड़ता है, तो उसने और भी तरकीबे लगाई। होटल मे आने-जानेवाले पुलिस के कमचारियों तथा खुफियों को उसने बात-बात मे यह बता दिया कि सामने के मकान मे कुछ बमपार्टी के फरार लोग रहते हैं ऐसा मालूम पड़ता है। पर पुलिस-वालों को तो इन दो कार्यकर्त्ताओं के सम्बन्ध मे सारी बाते मालूम थीं। वे इन पर अपने ढग से निगरानी रखते थे। इसलिये नेमी-चन्द की बातों को सुनकर वे पहले से अधिक चौकन्ने तो हो गये, पर उन्होंने कुछ करने से इन्कार किया। बात यह है कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद इन दो नौजवानों को अपने पहिये के नीचे पीस डालना चाहता तो था, पर जैसा कि इस प्रकार के शोषक सब वादों का नियम होता है, वे कुछ ढोंग कायम रखना चाहते थे। उसी के लिये यह ज़रूरी था कि कुछ नियमों का पालन किया जाय। इसी कारण अदालतें थीं, कानून थे, गवाही और वकील थे।

पर नेमीचन्द निराश होने वाला जीव नहीं था। उसने मकान-मालिक से मिलकर यह कोशिश की कि वह इन किरायेदारों को निकाल दे और वह बीस रुपया अधिक देकर इसे लेने के लिये तैयार है। बोला—"हें हे हे हें, आप जानते ही हैं कि मेरा काम बढ़ रहा है, इसलिए अगर वह मकान मुझे मिल जाय तो लकड़ी के पार्टीशन से उसके कई कमरे बनवा लें।"

मकान-मालिक नेमीचन्द से बहुत असन्तुष्ट था। वह जानता था कि इसी की कारस्तानी की वजह से उसके मकान मे किरायेदार टिक नहीं पाते। वह अपने वर्तमान किरायेदारों पर बहुत खुश था, क्योंकि गत दो सालों में वे ही पहले किरायेदार थे जो टिक पाये

थे। इनके कारण इस मकान के सम्बन्ध मे यह जो अपख्याति फैल गई थी कि यह भुतहा है, सो दूर हो गई थी। यह कितनी बड़ी बात थी। बोला—"यह तो आपकी मेहरबानी है, पर मैं अपने किरायेदारो को बिना कारण निकालूँ कैसे ?"

..."भली चलाई आपने इन किरायेदारों की। बमपार्टी के आदमी है, किसी दिन आपको ले बीतेंगे।"

मकान-मालिक ने कुछ श्लेष के साथ कहा—"उस मकान के लिये तो हमे ऐसे ही किरायेदार चाहियें। मालूम होता है भूत भी बमपार्टी के लोगों से घबड़ाता है। तब से जो छोड़ गया सो अब कहीं उसका पता नहीं है।"

नेमीचन्द बोला—"आपको मै ज्यादा किराया द रहा हूँ, फिर भी आप नहीं मानते। हॉ, अगर आप खुद बमपार्टी से सहानुभूति रखते हैं, तो बात दूसरी है।"

मकान-मालिक समझ गया कि उसे डराया जा रहा है, पर वह भी एक ही खुर्राट था। बोला—"मै तो अब तक बम पार्टी के विरुद्ध था, पर इस मकान के मामले मे मेरी समझ में आ गया कि कुछ बातों के लिये बमपार्टी की जरूरत है।"

इसी प्रकार दो सयानों में बातचीत होती रही। पर इसका कोई नतीजा नहीं निकला। नेमीचन्द को मकान नहीं मिला। वह क्रुद्ध तो हुआ, विशेषकर उसका क्रोध पुलिसवालों पर गया कि आँख के सामने इतनी बातें हो रही है, पर वे कुछ सुध नहीं लेते। पर वह गुस्सा पीकर रह जाने के लिये बाध्य हुआ।

इसका अर्थ यह नहीं कि उसने आगे कोई तरकीब नहीं की। उसने किशन से कहा—"ये लोग इतने इतने दिनों तक गायब रहते हैं, इनके यहाँ चोरी भी नहीं होती।"

किशन इशारा समझ गया, बोला—"हजूर क्या आप समझते

है कि मैंने इस बात को नहीं सोचा। पर चोर तो यह कहते हैं कि वहाँ धरा ही क्या है जो चोरी करे।"

नेमीचन्द ने निराशा के साहस से कहा—"कुछ मिले या न मिले उनके कागज़ात तो है, मैं तो देखता हूँ कि कुछ रसीद वही से और कुछ फाइले इनके यहाँ है। काम की है तभी तो रखते होंगे। दो चार बार ये फाइले गायब हुईं, तब तो ये यहाँ से भाग जायेंगे न।"

किशन ने कोई आश्वासन नहीं दिया। पर एक दिन सवेरे के समाचार-पत्रों मे निकला कि किसान सभा के दफ्तर से फाइलें उड़ गयी है। पत्रों ने यह लिखा कि यह किसी मामूली चोर का काम नहीं है, बल्कि साम्राज्यवादी पुलिस का काम है, जो इस बात पर तुली हुई है कि किसी भी दाम पर कांग्रेस, किसान सभा तथा अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं को दबाया जाय। सब पत्रों न पुलिस के इस आचरण की निन्दा की और चुनौती के लहजे मे सम्पादकीय लिखे। कुछ वामपक्षी पत्रों मे तो अर्णवकुमार का फोटो और सक्षिप्त जीवनी भी निकल गई।

नेमीचन्द को इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ। पर उसे सबसे अधिक आश्चर्य उस समय हुआ जब कि उस दिन पुलिस के बड़े दारोगा आकर होटल मे बैठ गये और लगे सबको फटकार बताने। उन्होंने कहा—"इसमे तो कोई गहरा षड्यन्त्र मालूम होता है। पुलिसवाले तो उस मकान के पास भी नही गये, और न मालूम किसने फाइलें उड़ा लीं।"

इस प्रकार साधारण से व्याख्यान देने के बाद उन्होने नेमीचंद से कहा—"तुम्हे कुछ मालूम तो नहीं है। यह काम तो किसी मामूली चोर का नही मालूम होता। मैं खूब समझ रहा हूँ कि इसमे कोई राज़ जरूर है। और ये राष्ट्रीय पत्र तो उधार खाये बैठे रहते हैं कि पुलिसवालों के विरुद्ध कुछ लिखने का मौका मिले

तो फ़ौरन उसका उपयोग करें। न मालूम किसने फाइलें चुराईं, और सारा दोष पुलिसवालों के सिर मढ़ दिया गया।"

नेमीचन्द ने साफ़ इन्कार किया। बोला—"हजूर हमें क्या मालूम। हम इतना जानते हैं कि सामने दो आदमी रहते हैं, कभी कभी आठ-दस भी हो जाते हैं। पता नहीं बत्ती बुझाकर क्या-क्या करते हैं। यहाँ तो अपने ही काम से फ़ुर्सत नहीं मिलती, दूसरे के काम में कहाँ तक पड़ूँ।"

बड़े दारोगा देर तक बैठे रहे। बराबर चिल्ला-चिल्लाकर व्याख्यान देते रहे। साथ-साथ उन्होंने करीब एक दर्जन प्लेट चाप कटलेट इत्यादि खाये। नेमीचंद ने लाकर एक ह्विस्की की बोतल रख दी। पर उसने शराब नहीं पी। बोला—"मैं ड्यूटी पर शराब नहीं पीता। उठते समय उसने नेमीचन्द से कहा कि अपने लोगों से हिदायत कर दे कि वे सामने के मकान पर देखरेख रक्खें। बोला—"आगे कभी ऐसा काम होगा, तो मैं होटल के सारे लोगों को बड़े घर की हवा खिला दूँगा।"

यह सब कहकर बड़े दारोगा जी डकार लेते हुए चले गये। जाते समय उन्होंने एक सिपाही से इशारा किया। उसने मेज़ पर से ह्विस्की की बोतल उठा ली। नेमीचंद दारोगा को जीप तक छोड़ने गया। जीप पर बैठकर दारोगा ने छोटे दारोगा से कहा—"आज से रात को इस मकान पर एक पहरा बैठा दो। आगे इस तरह फाइल वगैरह की चोरी नहीं होनी चाहिये। हमको कोई चीज़ लेनी होगी तो हम तलाशी से बरामद करेंगे।"

जीप रवाना हो गयी, और नेमीचन्द रुँआसा होकर होटल में लौट आया।

अर्णवकुमार वगैरह को इन सारी बातों का पता नहीं लगा। वे सच्चे दिल से विश्वास करते थे कि फाइलों की चोरी पुलिसवालों ने ही की है। ये कार्यकर्त्ता ब्रिटिश युग के पुलिसवालों की नीचता के सम्बन्ध में इतने निश्चित थे कि उन्हें इस विषय में कभी कोई कौतूहल नहीं हुआ।

कहना न होगा कि नेमीचन्द ने इसके बाद सामने के मकान वालों की तरफ आँख उठाकर देखने की हिम्मत भी नहीं की। उसे आश्चर्य ही नहीं परमाश्चर्य हुआ कि ये किसान सभा वाले सरकार के विरुद्ध हैं, और सरकार पहरे बैठाकर उनके यहाँ चोरी कराती है। यह बात उसकी कुछ समझ में नहीं आयी। पुलिसवालों के सम्बन्ध में वह यह तो समझ नहीं सकता था कि उनमें बनपार्टी के प्रति कोई सहानुभूति है, इसलिये उसने यह मान लिया कि ये सारे के सारे गदहे पुलिस विभाग में एकत्र हो रहे हैं। यद्यपि पुलिसवालों से वह बराबर मिला रहता था, पर उनके सम्बन्ध में उसकी धारणा कुछ अच्छी नहीं थी। इस घटना से उसकी धारणा और भी खराब हो गयी।

उधर वे दोनों कार्यकर्त्ता अपने काम में मस्त रहते थे। एक दिन वे कहीं दौरे से लौटे ही थे, और खिचड़ी डालने का डौल लगा रहे थे कि इतने में एक स्त्री की आवाज सुनायी पड़ी।—
"खोलो खोलो, कोई है ?"

कन्हैयालाल नीचे उतर आया। उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा था क्योंकि यहाँ किसान कार्यकर्त्ताओं की कार्यकारिणी की सभा न भले ही कॉग्रेस की एक नेत्री कभी-कभी आती हो, और तो कभी

कोई स्त्री यहाँ आती नहीं थी। कन्हैयालाल ने दरवाज़ा खोला तो सामने एक नौकरानी किस्म की स्त्री मालूम पड़ी। कन्हैयालाल ने कहा—"जी आप किसे ढूँढ़ रही है?"

उस स्त्री ने कहा—"यह किसान सभा का दफ्तर है न?"..कहकर उसने कौतूहल से देखा।

..."हाँ, यह दफ्तर है, क्या काम है?"

."एक चिट्ठी लाई हूँ। यह लीजिए—कहकर उसने न मालूम कहाँ से एक पत्र निकाला और उसे दिया।"

."पत्र किसने दिया?"..कहकर कन्हैयालाल ने उस पत्र को ले लिया, और उसे हाथ से टटोलने लगा, मानो इस प्रकार वह जानने की चेष्टा कर रहा हो कि इस पत्र में क्या है। उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा था। इस प्रकार रात्रि के अन्धकार मे एक स्त्री के हाथ मे पत्र पाना एक नई अभिज्ञता थी। उसके रोमांसप्रिय हृदय ने कहा, हो न हो इसमे कोई अद्भुत बात है।

वह स्त्री पत्र देकर यह कहकर चली गई कि देख लीजिये पत्र मे सब लिखा है। तब कन्हैयालाल पत्र लेकर अर्णव के पास गया। खिचड़ी चढ़ चुकी थी। अब दोनों जल्दी-जल्दी उस पत्र को लेकर बैठे। वह पत्र यों था :—

"आप मुझे जानते नहीं है। शायद कभी देखा हो। मै सामने के होटल मे नौकरी करती थी। मुझे वहाँ के हेडवेटर किशन ने फुसलाकर एक मकान मे लाकर बन्द कर रखा है। यहाँ वह रोज़ किसी न किसी को ले आता है, और मुझ से वेश्यावृत्ति करवाता है। इस दुनिया मे मेरा कोई नहीं है। इसलिये मे आपको लिख रही हूँ क्योंकि मैंने सुना है कि आप लोग बमपार्टी के लोग है, और बमपार्टी के लोग बड़े दयालु होते है। हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हूँ कि किसी तरह यहाँ से मेरा उद्धार कीजिये। मैं सब तरह से जन्म भर आपकी कृतज्ञ रहूँगी। और यदि आप से यह काम

न हो सके, तो कम से कम मुझे थोड़ा सा ज़हर पहुँचा दीजिये जिससे मैं इस पापमय जीवन का अन्त कर सकूँ।"

नीचे 'तारा' लिखा हुआ था और साथ ही पता भी दिया हुआ था। पत्र को पढ़कर दोनों कार्यकर्त्ता सन्नाटे मे रह गये। उन्हें आशा नहीं थी कि कभी ऐसा पत्र भी उन्हे मिलेगा। उन्हे किसानों से इस प्रकार के पत्र तो मिला करते थे कि ज़मींदार ने मेरा बैल खुलवा लिया या खेत कटवा लिया या बेदखल कर लिया, पर इस प्रकार का पत्र उन्हे कभी नहीं मिला था। दोनों याद करने लगे कि तारा कौन है। पर उनको कुछ याद नहीं आया। होटल में तो वे सैकड़ों स्त्रियों को देखते रहते थे। थोड़ी देर मे कन्हैयालाल ने कहा कि उसे कुछ याद आ रही है, सरजू ने उसे बताया था। पर वह भी ठीक-ठीक कुछ याद नहीं कर सका।

दोनों बड़ी देर तक कुछ समझ नही पाये कि क्या करना चाहिये। अर्णव बोला—"अभी खा पी लो, फिर कल देखा जायेगा।" पर कन्हैयालाल जोश मे आ चुका था। बोला—"आप क्या कह रहे है? एक स्त्री के साथ इतना अत्याचार हो, और आप कहते है कि कल देखा जायेगा। मेरी तो भूख जाती रही।"

अर्णव बोला—"जो कुछ इस पत्र मे लिखा है, तुम जानते हो कि इसमे कोई अनहोनी बात नही है। जिस समाज मे हम रहते है, उसमे वेश्यावृत्ति भी ज़रूरी समझी गयी है। यह भी एक तरह का शोषण है, और इसका आर्थिक, सामाजिक कारण है।

पर कन्हैयालाल को इस प्रकार की वैज्ञानिक व्याख्या पसन्द नहीं आयी। बोला—"आप खिचड़ी खाइये, मैं तो चला।"

अन्त मे दोनों मे समझौता हुआ। दोनों खिचड़ी खाकर एक-एक डंडा लेकर उस दिये हुए पते के लिये निकल पड़े। इस समय रात के ६ बजे थे। सड़कों पर लोगों का आना-जाना कम होने लगा था। कृष्णपक्ष था, आकाश मे तारे टिमटिमा रहे थे।

जल्दी ही वे दिये हुए पते पर पहुँच गये। यह तो एक बगला-सा मालूम पड़ा। बंगले के चारों तरफ बाग़ था। टार्च जलाकर इन्होंने बंगले का नामवाला बोर्ड ढूँढ़ा, पर ऐसा कोई बोर्ड नहीं था। देखा तो भीतर बाग़ में जंगल-सा हो रहा था। चारों तरफ सन्नाटा था। दोनों कुछ देर सलाह करके दो दिशा से नीची चहार-दीवारी फाँदकर बंगले के हाते में दाखिल हुए। दोनों अपने हाथों में डंडे को कसकर पकड़े हुए थे। वे धीरे-धीरे बंगले की तरफ बढ़े तो कहीं कोई बत्ती जलती हुई मालूम नहीं पड़ी।

अर्णवकुमार को यह सारा काम बिल्कुल नापसन्द था। केवल कन्हैयालाल की ज़िद के कारण ही वह उसके साथ चला आया था। इस कारण उसने जब सन्नाटा देखा तो वह हाते के अन्दर एक ऐसी जगह बैठ गया जहाँ से वह कन्हैयालाल को देख सकता था। कन्हैयालाल भी कुछ हिचकिचा रहा था। उसने ब्रिटिश भारतीय पुलिस की लाठियाँ खाई थीं, ज़मींदारों के भेजे हुए गुंडों का निर्भीकता से सामना किया था, पर यहाँ उसका जी घबड़ा रहा था। फिर भी वह टार्च जलाता बुझाता हुआ ऐन बंगले के एक दरवाज़े पर आ गया। कुछ देर तक उसने वहाँ कान लगाकर सुना, पर कहीं से कोई आवाज़ नहीं मालूम पड़ी। वह आशा करता था कि किसी स्त्री के रोने की आवाज़ मालूम पड़ेगी। पर कुछ भी सुनाई नहीं पड़ा। उसे केवल अपने हृदय की धड़कन सुनाई पड़ रही थी। एक बार उसके मन में आया कि कहीं किसी ने चिट्ठी लिखकर मखौल तो नहीं किया फिर भी विशेषकर अर्णवकुमार के सामने अपने मुँह बचाने के लिये उसने ज़ोर से डन्डे को दो दफे ज़मीन पर पटका, और बोला—"कोई है? तारा, तारा देवी।"

उधर से जैसे कोई क्षीण-सी आवाज़ हुई, पर यह आवाज़ स्पष्ट रूप से कैसी थी यह पता नहीं लगा। तब उसने निराश-सा

होकर अपने डन्डे को दो-तीन दफे दरवाज़े से मारा। अब की बार उधर से कोई आवाज़ हुई और यह स्पष्ट रूप से एक स्त्री की आवाज़ थी। न मालूम इस बात से क्या हुआ, कन्हैयालाल ने न आव देखा न ताव डंडे के सहारे बंगले के अन्दर वाली दीवार को फांद गया, और भीतर पहुँच गया।

अर्णवकुमार भी अब चौकन्ना हो गया था। वह आकर उस स्थान पर खड़ा हो गया जहाँ से कन्हैयालाल ने अभी दीवार पार की थी। वह सोच ही रहा था कि दीवार को पार करे कि नहीं, इतने में खुद ही कन्हैयालाल ने भीतर से उसे कहा—"आप बाहर रहिये।"

बाध्य होकर अर्णवकुमार ने वैसा ही किया, और वह वहीं पर खड़ा रहा। पर पहले की तरह अब उसका शरीर शिथिल नहीं था, वह तना हुआ सावधान खड़ा था और उसके हाथ में डंडा इस प्रकार से रखा हुआ था मानो कोई उससे डंडा छीनना चाहता है और वह उसके प्रतिरोध के लिये तैयार है। भीतर बातचीत की आवाज़ मालूम दे रही थी। दूसरा कंठ एक स्त्री का था। यद्यपि अर्णवकुमार को इस काम में बिल्कुल जोश नहीं था, पर अब उसे काफी दिलचस्पी मालूम हो रही थी। वह कान खड़े करके बात-चीत सुनने की कोशिश करता रहा पर उसमें सफल नहीं हुआ। एक बार उसने आकाश की ओर देखा, तारे जगमगा रहे थे। अकस्मात् उसे ऐसा अनुभव हुआ कि जो कुछ वह कर रहा है वह बहुत अच्छा है। उधर कुछ तोड़ने की आवाज़ मालूम पड़ी। अर्णवकुमार के हृदय की धड़कन बहुत बढ़ गई, और उसने बड़ी कठिनता से अपने को भीतर जाने से रोका। इतने ज़ोर से कुछ शायद दरवाज़ा तोड़ा जा रहा था, कहीं किसी ने सुन लिया तो? इसलिये उसका यहाँ पर डटा रहना ज़रूरी है। वह समय पर

कन्हैयालाल को चेतावनी तो दे सकेगा। ऐसा मालूम हुआ कि अन्त मे दरवाजा टूट गया। एकाएक बंगले की बत्तियाँ जल उठीं। और थोड़ी ही देर में दीवार फाँदकर नहीं दरवाजा खोलकर कन्हैयालाल और एक स्त्री बाहर आयी।

कुछ पूछने का समय नहीं था। तीनों जल्दी-जल्दी बंगले के हाते से बाहर निकल आये। अर्णवकुमार सोचने लगा यह अच्छा न्याय है कि इसमे एक स्त्री का इस प्रकार उद्धार करना भी जुर्म है। और क्या पता, स्त्री को जबर्दस्ती बन्द कर उससे वेश्यावृत्ति करवाने से बड़ा जुर्म हो। अर्णवकुमार यह सोचकर मन-ही-मन हँसा। एक बार उसके मन मे यह प्रश्न आया कि बंगले को इस प्रकार खुला छोड़ जाना उचित हुआ कि नहीं, फिर उसने सोचा कि इसमे तो आते समय आग लगा देनी चाहिये थी।

: २२ :

यद्यपि राजेन्द्र उर्फ केदारनाथ के द्वारा छोड़ी हुई स्त्री से नेमीचद को फायदा ही रहा, बहुत अधिक फायदा रहा, और वह आशा करता था कि आगे और फायदा रहेगा, तो भी वह इस समय इस झंझट को पसन्द नहीं करता था। बात यह है, अपने होटल को प्रथम श्रेणी के होटलों मे लाने के लिये वह उसमे पीछे की तरफ एक नृत्यशाला बनवा चुका था, बैंड भी ठीक हो चुका था, इस बैंड के नेता के रूप मे एक प्रतिभाशाली सफेद रूसी भी तैनात हो चुका था। दो एक दिन मे इस हाल का उद्‌घाटन होने वाला था। उसी के सम्बन्ध मे नेमीचन्द व्यस्त था। पर जब यह आफत आ गई तो उसे झेलना पड़ा। उसने उस स्त्री को जिसका नाम प्रभा था, होटल के कमरे से हटवाकर एक अन्य स्थान पर रखवा दिया। इस पर प्रभा रोई-धोई, पर नेमीचन्द ने उसे समझाया कि उसी की भलाई के लिये उसका यहाँ से चला जाना अच्छा है। पुलिस की आँख उस पर लग चुकी है, कहीं सारा भण्डाफोड़ न हो जाय, और उसके माँ-बाप घसीटे न जायं, इसलिये जरूरी है कि वह एक दम गायब हो जाय।

प्रभा को इस नई व्यवस्था मे राजी होना पड़ा। उधर होटल डी ताज मे बड़े समारोह से नृत्यशाला का उद्‌घाटन हुआ। नेमीचन्द ने चुने हुए लोगों को बुलाया था, और उसने उस दिन जी खोलकर खर्च किया। समाज के सब स्तम्भ जिनमे सरकारी कर्मचारियों से लेकर कांग्रेसी रईसों तक सभी बुलाये गये। समारोह बहुत सफल रहा। किशन ने इस समारोह में बहुत बड़ा हिस्सा लिया। आज उसकी पोशाक देखने लायक हो रही थी। यह उसी

दिन की घटना थी जिस दिन तारा अपने जेलखाने से भागकर किसान सभा के दफ़्तर में आई थी। कन्हैयालाल को भी पता नहीं था कि होटल मे क्या हो रहा है क्योंकि वह उसी दिन संध्या समय बाहर के दौरे से आया था। पर सब लोगों ने समझा कि कोई खास बात है।

बहुत रात बीतने पर किशन को छुट्टी हुई। जब सब निमंत्रित चले गये तो किशन होटल के ही एक कमरे मे सो गया। जब सवेरा हुआ तो उसे तारा की बात याद आई। पर उसके सिर मे दर्द हो रहा था। इसलिये उसने तारा के सम्बन्ध मे खबर लेने की बात को टाल दिया, और नहा-धोकर अपने काम मे जुट गया। इतने मे जहाँ प्रभा को रखा था वहाँ से खबर आई कि उसको दर्द उठा है, और वह जल्दी चले। नतीजा यह हुआ कि उसे जाकर एक दाई की व्यवस्था करनी पड़ी। यह तय करना था कि बच्चे का क्या करना है। किशन को इस सम्बन्ध मे किसी प्रकार के विवेक का दंशन नहीं था। कई बार वह नवजात शिशुओं को एक कपड़े में लपेटकर चौराहे पर रख आया था। अबकी बार भी वह ऐसा करने के लिये तैयार था, पर इस सम्बन्ध मे कुछ तय तो हुआ नहीं था। नेमीचन्द को ढूँढ़ा तो मालूम हुआ कि वह तो घर से लौटा नहीं। उसे बड़ा क्रोध आया। रुपये देते वक्त तो उसे केवल पचीस दिये जाते हैं, पर सारी जिम्मेदारी उसी की है।

उसने मन-ही-मन नेमीचन्द को बहुत गालियाँ दीं, पर फौरन काम पर जुट गया। वह यही मना रहा था कि बच्चा दिन में न हो, क्यों तब तक शायद नेमीचन्द आ जाये, और रात के अन्धेरे मे ही ये सारे काम अच्छे होते हैं।

जो कुछ भी हो, किशन फ़ौरन काम में जुट गया, और दिन कहाँ से निकल गया इसका पता ही नहीं हुआ। ईश्वर ने मालूम होता है उसकी बात सुन ली, और दिन में प्रभा का प्रसव नहीं

हुआ। नेमीचन्द उस दिन दिन-भर नहीं आया। पहली बार शाम के पाँच बजे होटल में आया। वह अभी बैठा ही था कि बड़े दारोगा साहब जीप पर बैठकर सीधे उसके यहाँ पहुँचे। कहना न होगा कि नेमीचन्द ने बड़े दारोगा का इतना शीघ्र आना पसन्द नहीं किया। उसका माथा ठनका कि न मालूम क्या बात हो गई। कहीं सामने के मकान मे फिर से चोरी तो नहीं हुई। उस बार तो खैर चोरी कराने मे उसका हाथ था, पर तब से तो उसने उस तरफ घूमकर भी नही देखा। पर पता नहीं किशन के मन की बात कौन जाने। अक्सर वह उसे बिना बताये बहुत से काम करता है और बाद को उसका समर्थन प्राप्त करता है।

इसी प्रकार उधेड़-बुन मे नेमीचन्द ने बड़े दारोगा जी का स्वागत किया। मन मे उसे यह भी डर था कि कल के जशन मे बड़े दारोगा जी को नही बुलाया, शायद इसीलिये नाराज़ हों, और कोई बहाना लेकर आया हो। बड़े दारोगा जी के बैठते ही नेमीचन्द ने कहा—क्या मंगाऊँ, चाय, कॉफी या और कुछ ? . कहकर उसने दारोगा जी के मुँह की तरफ देखा।

दारोगा जो ने जैसे कुछ सुना ही न हो, बोले ."अमाँ यह तुम्हारे यहाँ किशन कोई है ?"

.. हाँ, हाँ किशन एक तो हमारा हेडवेटर है, और दूसरा बावर्ची भी है।

बड़े दारोगा जी जैसे कुछ मन में हिसाब लगाते रहे। कुछ देर सोचकर बोले . "नहीं नही यह बावर्ची का काम नहीं है, यह तो वही हेडवेटर होगा। मैंने शायद उसे देखा है।"

"...जी हाँ, जरूर आपने उसे देखा होगा, पर बात क्या है यह तो बताइये।"

दारोगा जी ने टाँगे फैला लीं। फिर जिस दरवाज़े से किसान सभा का दफ्तर दिखाई पड़ता था, उस दरवाज़े से बाहर की ओर

देखते हुए बोले..."अभी बताता हूँ। अच्छा यह बताओ कि तुम्हारे यहाँ तारा नाम की कोई लड़की थी।"

"...जी हाँ, थी। पर वह कोई दो महीनों से हम लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं रखती।"—कहकर वह आगे हड़ताल की बात कहने जा रहा था, पर कुछ समझ कर चुप हो गया।

दारोगा जी इसी तरह खोद-खोदकर प्रश्न करने लगे जिनका रुख क्या है यह नेमीचन्द अनुमान न कर सका। इतना तो वह समझ चुका था कि स्वयं उस पर कोई ख़ास अभियोग नहीं है। रहा किशन, सो उसके लिये उसे बड़ा डर रहता था। पर जैसा करेगा वैसा भरेगा। दारोगा जी प्रश्न पूछते जाते थे, और नेमीचन्द नये-नये अनुमान करता जाता था। चाय आ गई थी, और साथ-साथ अन्य सरंजाम। दारोगा जी एक-एक चुस्की लेते और एक-एक गुलछर्रा छोड़ देते। नेमीचन्द की घबड़ाहट का वे विशेष उपभोग कर रहे थे। सच तो यह है कि उन्हें ऐसा प्रशिक्षण मिला था कि वे यह समझते थे कि एक पुलिस अफ़सर का कर्त्तव्य यह है कि जनता को घबड़ा दे और उसे डरावे। वे इस नीति को दुष्ट और शिष्ट सबके साथ बिना पक्षपात के एक साथ प्रयोग करते थे।

इतने में स्वयं किशन वहाँ पर आ गया। उसे होटल में लौटते ही मालूम हो गया था कि दारोगा जी आये हुए हैं, इस कारण वह स्वयं उनकी ख़ुशामद करने वहाँ पहुँचा। नेमीचन्द ने दूर से उसे देखकर आँख मारी थी, पर किशन ने या तो उसे देखा नहीं या तो देखकर भी नहीं देखा। वह चाहता था कि वह भी दारोगा जी से घनिष्टता बढ़ावे। दारोगा जी ने उसे देखते ही पहिचान लिया। पर बन गये। नेमीचन्द से पूछा—"यही आपका हेडवेटर है।"

नेमीचन्द कुछ कह भी नहीं पाया था कि किशन ख़ुद बोल उठा

—"जी हाँ, हजूर के इस गुलाम को लोग किशन कहते हैं।"—कहकर उसने अदब के साथ मुस्करा दिया।

बड़े दारोगाजी उस समय एक कटलेट को हड्डी से छुड़ाने में व्यस्त थे। उन्होंने उस कार्य को सफलतापूर्वक करके कहा—"तुम बड़े आशिकमिजाज़ मालूम होते हो।"

नेमीचन्द सन्नाटा मार गया, पर किशन ने हे हे हें हे करते हुए कहा..."हजूर के सामने अब क्या अपनी बखान करूँ?"

दारोगा जी मुस्कराये। चाय पीना खतम कर बोले—"क्यों जी तुम कभी जेलखाने तो नहीं गये हो? एक दफे हो आओ तो कैसा रहे? दुनिया के सारे तजर्बे ले लेने चाहिये।" कहकर उन्होंने नेमीचन्द की तरफ देखा।

नेमीचन्द की तो यह हालत हुई थी कि काटो तो लहू नहीं। किशन का चेहरा भी फक पड़ गया। तब दारोगा जी ने सारी बात सुनाई। उन्होंने यह बताया कि किसान सभा वाले तारा को साथ मे लेकर किशन के विरुद्ध रिपोर्ट लिखवा गये है। उन्होंने यह भी बतलाया कि रिपोर्ट मे जो बाते लिखवाई गई, उनमे से कुछ का प्रमाण भी मिल गया। कहकर उन्होंने किशन की तरफ देखा। किशन को तारा के भागने की बात मालूम नहीं थी, इस कारण उसे पहले तो बड़ा आश्चर्य हुआ, पर समझ गया कि जो कुछ कहा जा रहा है, उसमें सचाई है।

फिर भी उसने आत्मरक्षा के उद्देश्य से कहा—"हजूर सब बातें झूठी है। आप जानते ही होंगे कि वह एक पेशा करने वाली औरत है, किसान सभा वालों ने उसे सिखाकर मेरे खिलाफ़ खड़ा कर दिया होगा।"

कहने को तो वह यह कह गया, पर जब वह कह चुका तो उसे स्वयं यह बात बिल्कुल नहीं जंची। दारोगा जी ने तो जैसे उसकी बातों को सुना ही नहीं। नेमीचन्द से बोले—"मैं तो इसे कबका गिर-

फ्तार कर चुका होता, पर तुम्हारी वजह से सोचा कि चलकर तुम्हें पूछ लूँ।"

असली बात तो यों थी कि दारोगा जी कुछ बड़ी रकम बनाना चाहते थे। एक दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह भी थी कि वे यह नहीं चाहते थे कि इस प्रकार किसान सभा के कार्यकर्त्ताओं का जनता में नाम हो। यदि इस सम्बन्ध मे कोई भी कार्यवाही की जाती, तो चारों ओर जैसे एक तरफ होटल डी ताज की बदनामी होती, उसी प्रकार से किसान सभा के कार्यकर्त्ताओं की ख्याति बढ़ती, जो किसी भी प्रकार वांछनीय नहीं थी। ब्रिटिश सरकार को किसान सभायें फूटी आँख नहीं भाती थीं।

पर उन्होंने नेमीचन्द पर ही सारा एहसान जताया। नेमीचन्द इसका मतलब समझ गया। वह यह भी समझ गया कि इस संबंध मे जो खर्च होगा, उसका बहुत बड़ा हिस्सा किशन की जेब से आने पर भी उसे भी कुछ देना ही पड़ेगा। वह इस सम्भावना से बहुत दुःखी हुआ। पर दुःखी होने के साथ-साथ उसने अनिवार्य को मान लिया। किशन को इशारे से एक बोतल लाने के लिये कह दिया गया, और दोनों बड़ी देर तक गुपचुप बातें करते रहे। दारोगा जी ने एक हजार माँगा, बोले—समझ नहीं रहे हो मैं अपने ऊपर कितनी विपत्ति ले रहा हूँ। यह कोई मामूली मुकदमा थोड़े ही है कि दबा दूँगा तो दब जायेगा। किसान सभा वाले इसे लेकर अखबारों मे बयान निकलवायेंगे, यह एक राजनैतिक प्रश्न बन जायेगा, और फिर हमें जवाब देते-देते आफत पड़ेगी। तुम्हारी दोस्ती की वजह से मैं सब कुछ झेलूँगा, पर जानते हो कि इस मामले में मुझे सब से पहले अपने नीचेवालों का मुँह बन्द करना पड़ेगा।

सच तो यह है कि दारोगा जी ने पहले ही से अपनी बचत का रास्ता ढूँढ़ रक्खा था। वे यह प्रमाणित करने वाले थे कि तारा

एक बदमाश औरत है, और वह जो शिकायत कर रही है वह झूठी है। वह यह कहने वाले थे कि किशन की मदद से तारा गुप्त वेश्यावृत्ति करती थी। अब दोनों में हिस्से बँटवारे पर कुछ झगड़ा हुआ होगा, इसी के लिये यह मुकदमा बनाया गया था। दारोगा जी को विश्वास था कि ज्यों ही वे यह साबित कर देंगे कि तारा एक मामूली वेश्या है त्यों ही अर्णवकुमार और कन्हैयालाल इस मामले से हाथ खींच लेंगे।

पर ऐसा सोचने पर भी नेमीचन्द को इसका काला पहलू ही दिखाना था। उन्होंने यही दिखाया कि वे मानो शहीद होने को तैयार हैं, बस जो कुछ बाधक है, वह इतना ही है कि नीचे वालों का मुँह बन्द कर दिया जाय।

देर तक मोल-भाव करने के बाद मामला नौ सौ में तय हुआ। मामूली तौर पर यह मामला और कम में तय होना चाहिये था, पर किसान सभा के बीच में पड़ने के कारण दारोगा जी इससे नीचे उतरे ही नहीं। उन्हें कुछ सन्देह था कि शायद मामले के दबाने में कुछ दिक्कत हो।

जब मामला तय हो गया तब दारोगा जी उठे, पर उन्होंने दी हुई व्हिस्की की बोतल लेने से इन्कार किया। बोले—"फिर कभी ले लूँगा, अभी तो सामने जा रहा हूँ। देखूँ वहाँ क्या हो रहा है।"

कहकर दारोगा जी सामने किसान सभा के दफ्तर में गये। सौभाग्य से अर्णवकुमार और कन्हैयालाल दोनों वहाँ मौजूद थे। दारोगा जी को देखकर उन दोनों ने बनावटी तपाक से उनका स्वागत किया। अर्णव बोला—"कहिये हमें ससुराल ले जाने तो नहीं आये ?"

दारोगा जी अपने स्वभाव-सिद्ध औद्धत्य को छोड़कर बोले—

"बस तुम लोग तो यही समझते हो कि जब आते हैं तो इसी काम के लिये आते हैं। अरे भाई हम भी देश से प्रेम करते हैं, नौकरी कर ली तो कोई अंग्रेज़ तो नहीं हो गये" ..कहकर वे सभा की अत्यन्त पुरानी दरी पर पतलून समेत बैठ गये। फिर बोले—"भाई कभी-कभी बात मान लिया करो। यह जो मामला है, इससे सभा की नामवरी नहीं होगी।"

"कौन सा मामला ?"

..."यही तारा वाला मामला। मैं अभी होटल में गया था तो पता लगा कि यह लड़की तारा एक वेश्या है। कभी किशन की इसके साथ शायद शादी भी हुई थी। फिर बाद को दोनों मिलकर उसी मकान मे चकला चलाते थे। फिर किसी मामले मे दोनों मे झगड़ा हो गया तो यह गुल खिला। मैं किशन को ११० मे चालान कर रहा हूँ, तारा को तुम लोग सलाह दो कि किसी आश्रम मे दाखिल हो जाय। दुष्ट को सज़ा देना, सो मैं दे ही रहा हूँ। इसमे किसान सभा नाहक को पड़े तो बदनामी होगी।"

दारोगा जी के मुँह से एक के बाद एक झूठी बात इस तरह से निकलती गई, जैसे संध्या के बाद तारे खिलते हों। ब्रिटिश युग की पुलिस की यह विशेषता थी कि वे झूठ बोलने मे पारंगत होते थे।

अर्णव और कन्हैयालाल एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। दारोगा जी समझ गये कि ये सन्देह मे पड़ चुके हैं। उन्होंने इन लोगों की घबड़ाहट और भी बढ़ा देने के लिये एक क्रान्तिकारी प्रस्ताव रक्खा। बोले—"तारा की भलाई को देखते हुए मैं यह समझता हूँ कि इस मुकद्दमे को बिल्कुल आने न दिया जाय, और तारा के उद्धार के लिए यह अच्छा होगा कि तुम मे से कोई उससे शादी कर ले।"

दारोगाजी के इस प्रस्ताव को सुनकर दोनों में से कोई भी

खुश नहीं हुआ। कन्हैयालाल बोला—"हम लोग तो आजीवन कुँवारे रहकर ही देशसेवा करेंगे।"...कहकर उसने जैसे कुछ सोचते हुए पूछा—"क्या तारा वैसी ही है जैसा आप कह रहे हैं। मुझे तो वह भोली-भाली लगती है।"

..."तो मैं तो कह रहा हूँ कि उससे शादी कर लो, जो कुछ तथ्य है सो मैंने बता दिया। अब जैसी तुम लोगों की खुशी हो वैसा करो। यह तो जानते हो कि जब मुकद्दमा चलेगा तो किशन भी कुछ कहेगा। एक तो वह कहेगा कि तारा उसकी ब्याहता बीबी है, दूसरा वह यह भी शायद कहे कि तुम लोगों में से कोई उसकी बीबी याने तारा पर आशिक था।"

. "वह ऐसा कहेगा?" ..घबड़ाकर अर्णव ने पूछा।

.."हाँ मुकद्दमा ही ठहरा, दोनों तरफ वकील होंगे, फिर झूठ बोलना बुलवाना कैसे बच सकता है।"

.."आपके विचार में सच्चा मुकद्दमा हो नहीं सकता?"

. "मेरे तजर्बे में तो कभी नहीं हुआ। कानून ही ऐसे हैं कि सच्चे मुकद्दमे में भी झूठे गवाहों की जरूरत होती है।"

"दारोगा जी ने समझ लिया कि ये डर गये हैं और काम बन जायेगा।" अर्णव ने कन्हैयालाल को तिरस्कारमूलक दृष्टि से विद्ध करते हुए कहा—"मैंने तुम से पहले ही कहा था कि जड़ का इलाज होना चाहिये, टहनियों में पानी देने से कुछ नहीं बनता।"

दारोगाजी ने वैज्ञानिक मुहूर्त जानकर कहा—"उधर जिस बंगले से तुम लोग तारा को ले आये, उस बंगले के मालिक ने रिपोर्ट लिखवाई है कि न मालूम कौन लोग उसके दरवाजे तोड़कर बहुत-सा सामान चुरा ले गये। इसमें तुम लोग फँसते हो क्योंकि यदि तारा वहाँ कैद थी तो पुलिस ले जाकर उसके उद्धार करने का हक तुम्हें था, पर इस तरह से दरवाजा तोड़ना तो जुर्म है। कानून अगर किशन को सजा देगा, तो तुम लोग भी अछूता नहीं बचोगे।"

यह दारोगा जी का ट्रम्पकार्ड था। इसे खेलकर वे पतलून झाड़कर वहाँ से उठे, और बोले—"जो कुछ तै करना हो सो बता देना। यहाँ तो समझाना काम है।"

दारोगाजी वहाँ से उठकर अपनी जीप पर जाकर बैठे। सामने ही होटल के नीचे नेमीचन्द उत्सुक दृष्टि से उनकी बाट जोह रहा था। उन्होंने इशारे से कहा कि काम नहीं बना, फिर चलते समय बोतल का इशारा कर दिया कि उसे भेज देना। यद्यपि मामला तय हो चुका था, पर दारोगाजी को अभी रुपये नहीं मिले थे। इसलिये वे यही उचित समझते थे कि जब तक रुपया वसूल न हो इन लोगों को अन्धकार मे रखा जाय।

जब दारोगा जी चले गये, तब नेमीचन्द ने किशन को बहुत बुरा-भला कहा, और बोला—"बहुत मुश्किल से पन्द्रह सौ मे मामला तय हुआ, इसमे से एक हजार तुम दो, और पाँच सौ मैं दूँगा। यह पाँच सौ भी मैं धीरे-धीरे काट लूँगा। किसी तरह वे इससे कम में राजी नहीं हुए।"

किशन क्या कहता उसे राजी होना पड़ा।

: २३ :

उसी रात प्रभा को एक लड़का हुआ। किशन तो उस तरफ गया भी नहीं। जब नेमीचन्द ने उससे कहा कि वह इस लड़के को कहीं डाल आवे, तो किशन ज़मीन की तरफ देखकर चुप रहा। पर वहाँ तो देर हो रही थी। नेमीचन्द ने फिर कहा, तो किशन ने कहा—"हजूर अब मैंने तय किया है कि कानून के खिलाफ कोई काम नहीं करूँगा।'

"यह तो कोई अक्ल की बात नहीं है।"

.."जब किसी काम मे फँस जाऊँगा तो आप तो अलग हो जायेंगे और मैं फँस जाऊँगा।"

नेमीचन्द बोला—"अच्छा यह बात है। तुमने मेरे लिये तो तारा को उस बंगले में कैद नहीं रखा था। मेरे किसी काम में तुम पकड़े जाओ तो मैं ज़िम्मेदार हूँ।"

...'पर ग़रीब आदमी हूँ, पन्द्रह सौ कहाँ से लाऊँगा। अब गलती हो गई सो हो गई। मैं तो मर गया" ..कहकर वह अत्यंत अप्रत्याशित रूप से फफकने लगा।

नेमीचन्द ने कहा—"अच्छी बात है तुमने मेरी बड़ी सेवायें की हैं, इसलिये जो पाँच सौ रुपये मैं दूँगा, उन्हें मैं तुम्हारी तनख्वाह से काटूँगा नहीं, पर हज़ार तो तुम्हें देना पड़ेगा। तारा से तुमने एक हज़ार तो कमवा ही लिया होगा।"

..."कहाँ हजूर, अभी तो चार छः दिन ही हुए थे कि यह किस्सा हुआ।"

जो कुछ भी हो किशन को हज़ार रुपये देने पर राज़ी होना पड़ा। किशन खुशी-खुशी काम पर चला गया। उसने सोचा अभी

तो बेटा से ५०० रुपये घटवाया है, आगे कोई और काम पड़ेगा तो देख लूँगा। यह सोचकर वह दाई के हाथ से सद्योजात बच्चे को लेकर एक सुनसान सड़क पर रख आया।

फिर वह रात को उस बंगले के मालिक के पास पहुँचा। बगले का मालिक उस पर बहुत बिगड़ा, और बोला—"तुम बड़े नालायक हो। मैने यह समझकर तुम्हे अपना बंगला दिया था कि तुम उसमे किसी दोस्त को रक्खोगे। पर वहाँ तो तुमने चकला चला दिया था। मुकद्दमा चलेगा तो मैं तो यही कहूँगा कि तुम लोग अनधिकार प्रवेश कर मेरे बंगले मे घुस आये थे। मै अपने सिर पर बदनामी थोड़े ही लूँगा।"

किशन नम्रता से सारी बाते सुनता रहा। उसके मुँह पर आज जैसे ताला लग गया था। बहुत देर तक सुनने के बाद उसने आर्त्त स्वर मे कहा—"हजूर अब क्यों गालियाँ दे रहे है ? अब मैं तो कम-से-कम सात वर्ष के लिये जेलखाने मं जा रहा हूँ। अब घाव पर नमक क्यों छिड़क रहे है ? मै तो इसलिये आया था कि आप का धन्यवाद करूँ कि आपने मेरे लिए बहुत कुछ किया।"

यद्यपि तिरस्कार करते समय उस व्यक्ति ने यह कहा था कि वह कह देगा कि ये लोग उसके बगले मे अनधिकार प्रवेश किये हुए थे, पर जब उसने देखा कि मुकद्दमा तैयार है, सो वह घबड़ा गया। वह समाज मे बहुत शरीफ और सज्जनरूप मे प्रसिद्ध था। किशन उसे इस बंगले मे स्त्रियाँ पहुँचाया करता था। किसी को कानोंकान खबर नहीं होती थी। सच तो यह है कि यह बगला किशन के ही कब्जे मे रहता था। बाबू साहब तो कभी-कभी आते थे।

बाबू साहब के पूछने पर किशन ने बतलाया कि इस मकान की रिपोर्ट पुलिस मे हो चुकी है। बाबू साहब को इतना तो पता था ही। स्वयं पुलिसवालों ने उनसे पूछताछ की थी, इसी के फल-

स्वरूप उनको असली बात की कुछ झलक मिल गई थी। ये स्वयं भी तारा के पास आये थे, पर उन्हें यह पता नहीं था कि तारा स्थायीरूप से कई दिनों तक इस बंगले में रक्खी गई थी, और दूसरे लोग भी उसके पास आते थे। किशन ने इस मामले में अपने को निर्दोष बताते हुए कहा—"मैं तो तारा को आपके लिये लाया था, मैं तो दिन भर उधर लगा रहता था, और यह हरामजादी इधर पेशा करती थी।" कहकर उसने बाबू साहब के चेहरे की ओर देखा, और मानो उससे अनुप्रेरित होकर बोला—"नेमीचंद के वकील साहब कहते थे कि इसमें कई आदमियों को सजा होगी। मुझे तो अफसोस है तो इस बात का है कि नाहक आप इसमें फँस रहे हैं। वकील साहब कहते थे कि आप पर यह अभियोग शायद लगाया जाय कि बिना रजिस्ट्री किये हुए अपने बंगले पर चकला रखते थे।"

बाबू साहब इस पर बहुत घबड़ाये। कहाँ तो वे समाज में बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति समझे जाते थे, और कहाँ उन पर यह आफ़त आई। छी छी, चकला रखना। इससे बढ़कर बदनामी और क्या हो सकती है। अपने प्रति करुणा से मन पूर्ण हो गया।

किशन ने जो चाहा था, बाबू साहब के मन पर वही परिणाम होते देखकर वह बहुत खुश हुआ। चेहरे को रुआँसा बनाकर बोला—"न तो मुझसे १५०० रुपये दिये जायेंगे, और न मैं बच सकूँगा। बाबू जी मैं तो आपसे माफी माँगने के लिये आया था। अब चलता हूँ।" ..कहकर वह सचमुच उठ खड़ा हुआ, फिर बोला "मन में तो बहुत सी तमन्ना थी, एक इतनी नायाब लड़की का पता लगा है, तमन्ना थी कि उसे लाकर आपको हाज़िर करूँ। खैर"...कहकर उसने लम्बी साँस ली।

बाबू साहब ने नायाब लड़की की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया बोले—"यह पन्द्रह सौ क्या मामला है?"

तब किशन ने खोलकर सारी बातें बताईं कि पन्द्रह सौ में सारा मामला दब सकता है। किशन बोला—"पर मेरे पास तो कुल १५० रुपये होंगे। इधर-उधर माँगने-जाँचने से और सौ हो जा सकता है। पर पन्द्रह सौ कहाँ से लाऊँ।"

इस पर बाबू साहब बोले—"तुम मुझ से रुपये उधार ले लो, सौ पचास करके दे देना। तुम्हे सूद नहीं देना पड़ेगा।" . कहकर उन्होंने अभयदानसूचक दृष्टिपात किया।

पर किशन का चेहरा फिर भी रुआँसा बना रहा, बोला—"हजूर इतने रुपये मैं किस बात के बल पर उधार लूँ। बाद को जब रुपये नहीं दे पाऊँगा तब जेलखाने की हवा खानी पड़ेगी। इससे अच्छा है कि अभी जवान हूँ, जेल काट लूँ, बाद को बुढ़ापे मे जेल काटते नहीं बनेगी।"

कहकर वह चलने को हुआ। पर बाबू साहब ने उसका धीरज बंधाया, और जब किशन किसी भी प्रकार उधार लेने के लिये तैयार नहीं हुआ, बुढ़ापे मे जेल काटा नहीं जायेगा, यह कहता रहा तब बाबू साहब ने कहा . अच्छा रुपये ले लेना, देते बने तो देना, न देते बने तो न देना।

किशन बहुत खुश होकर चला गया। आज जो सौदा हुआ था, उससे वह बहुत खुश था।

प्रभा को जब यह मालूम हुआ कि उसका बच्चा उससे अलग कर दिया गया है, तो वह बहुत दुःखी हुई। सच तो यह है कि उसे अपने बच्चे को देखने का मौक़ा ही नहीं मिला था। उसे यह भी पता नहीं था कि वह लड़का था या लड़की। उसकी बेहोशी की हालत में ही सारा काम हो गया था। किशन ने भी यह नहीं देखा था कि जिस बच्चे को वह रात के अन्धेरे में छोड़ आया, वह बच्चा था या बच्ची। इस सम्बन्ध में उसका न्यारा ही दर्शन-शास्त्र था। मुँह देखने से शायद मोह लग जाय, इस कारण वह बच्चे को चादर में लपेटवा लेता था। इस बार भी ऐसे ही किया गया था।

जब प्रभा अपनी असहाय अवस्था पर रोने लगी, तो दाई ने उसको समझाया "बिटिया, यह जो कुछ हुआ सो अच्छा ही हुआ। बच्चा क्या था, यह तो तुम्हारे विरुद्ध एक प्रमाण था, जीता जागता प्रमाण। उससे तुम्हें छुटकारा मिल गया यह अच्छा ही हुआ।"...कहकर उससे सान्त्वना देते हुए कहा—"भले ही तुम्हारे पास न रहे, वह बड़ी अच्छी तरह रहेगा। पढ़ेगा-लिखेगा, बड़ा होकर कोई अच्छा आदमी होगा।"

यह सुनकर प्रभा की आँखें एक बार चमक उठीं। पर वर्तमान इतना कड़ुवा था कि भविष्य के स्वप्नों में निवास करना सम्भव नहीं था। उसने सोचा सच तो है, यह एक बन्धन था, अब तो शायद मैं घर लौट भी सकूँ। पर केदारनाथ कितना बेवफा निकला। छोड़कर भाग गया।

इसी प्रकार सोचते-सोचते वह दस पन्द्रह दिनों में इस लायक हो गई कि चल फिर सके। इतने दिनों का यह जीवन एक भयंकर

दुःस्वप्न की तरह ज्ञात हो रहा था। पर वह दुःस्वप्न उसके शरीर तथा मन पर अपना विषैला चिन्ह छोड़ गया था। पर यदि भूत-काल एक दुःस्वप्न था, तो भविष्य भी कुछ अच्छा नहीं ज्ञात होता था। वह निरंतर यही सोचा करती थी कि आगे क्या हो। न मालूम क्यों घर लौटने की इच्छा नहीं होती थी। वह जानती थी कि घर लौटने पर उसका कैसा स्वागत होगा। अन्तिम दिनों में तो उसके लिये घर एक कष्टकर कारागार-सा हो गया था। पर यहाँ भी कौन अच्छा है? यह बुढ़िया दाई है। बीच-बीच में किशन आता है और बुढ़िया से कुछ गुपचुप बात करके चला जाता है। दो बार नेमीचंद भी आया था। पहले वह केदारनाथ उर्फ राजेन्द्र से किस तरह मिलता था, और अब वह उससे ऐसे मिलता था मानो वह उसका मालिक हो। उसे यह सब अच्छा नहीं लगता था। अपने गहने-गुरिये माँगकर वह इन लोगों से छुटकारा क्यों न कर ले। उसके गहने कुछ नहीं तो दो हजार के होंगे। यदि इन दिनों का खर्च भी निकाल दिया जाय, तो काफी रुपये बचेंगे।

एक दिन किशन आया तो प्रभा ने दबते हुए कहा—"अब यहाँ रहने से क्या फायदा। नेमीचंद जी से कहिये कि आकर हिसाब कर लें, और मेरे गहने दे दें।"

किशन का भी दाँत इन गहनों पर था, पर वह इन्हे पा नहीं सकता था। नेमीचंद ने सारे गहने अपने पास रख लिये थे। किशन जानता था कि नेमीचंद इन्हे उगलनेवाला नहीं है। बोला—"हाँ, मेरी भी राय यही है कि तुम अब यहाँ न रहो। मैं नेमीचंद से कहूँगा।"

कहकर वह उस दिन के लिये बिदा हो गया। उसने नेमीचद से जाकर गहनों की बात कही। पर नेमीचंद तो घुटा हुआ था, बोला—"मैंने तो तुरन्त उन गहनों को यह समझकर कि कहीं चोरी के माल न हों, बेच डाला। दो सौ या कितने रुपये मिले

है" ऐसा नेमीचन्द ने जानबूझकर कहा था। वह जानता था कि किशन इतना दुधमुहाँ नहीं है कि यह समझे कि नेमीचंद गहने लौटानेवाला है। वह जानता था कि इस प्रकार प्रश्न करने में किशन का उद्देश्य यह था कि उसे भी कुछ हिस्सा दिया जाय। इसी से बचने के लिए उसने फ़ौरन यह झूठा किस्सा गढ़कर सुना दिया।

खग जाने खग ही की भाषा। किशन सारी परिस्थिति समझ गया। उसने समझा कि इस विषय पर झगड़ा करना बेकार है। वह और कहीं इसका बदला निकाल लेगा। बोला—"उतने तो उस पर खर्च ही हो गये होंगे।"

."हाँ नहीं तो क्या ?"...कुछ झेंपकर नेमीचंद बोला।

इसके बाद दोनों में कुछ गुपचुप बातें हुई।

किशन संध्या समय प्रभा के पास पहुँचा। बोला—"मैंने नेमीचन्द को सब बातें बता दीं। वह बोला—खर्चा बहुत बैठा है, फिर भी कितना बकाया बचा है।

"—तो क्या उसने मेरे गहने बेच लिये ?"

"—मुझे कुछ नहीं मालूम, मुझे जो कुछ बताया सो कह दिया। तुम आज चलकर उनसे बात न कर लो।

.. "अच्छी बात है। होटल में चलती हूँ।"

"होटल में नहीं, उन्होंने एक वकील साहब के यहाँ बुलाया है। बोले कि लेन-देन का मामला है किसी शरीफ़ आदमी के सामने होना चाहिये।"

..."हाँ हाँ ठीक है कब चलूँ कल ?"

..."नहीं, नहीं अभी..."

..."तो मैं अभी तैयार होकर आई।"

वह उधर तैयार होने गई और किशन ने दाई को नेमीचन्द की सारी हिदायतें समझा दीं।

थोड़ी ही देर मे प्रभा और किशन एक तांगे पर सवार बाबू साहब के बंगले पर पहुँचे। बाबू साहब को फोन पर ही खबर मिल गई थी, और वे सब सामान से लैस होकर अपने इस एकान्त बंगले मे आये थे। उनकी आँखों से ही पता लगता था कि वे खूब चढ़ाये हुए थे। उन्होंने तपाक से किशन और प्रभा का स्वागत किया। किशन बोला—"वकील साहब यह आपसे कुछ मशविरा करने आई हैं।"

वकील साहब कहे जाने पर बाबू साहब कुछ चौंके, पर समझ गये कि यह भी कोई खेल है। बोले—"आइये, आइये मैं आप की ख़िदमत मे हाज़िर हूँ।"

दोनों जाकर उसी सुसज्जित कमरे मे बैठ गये, जहाँ तारा कैद थी। तारा ने इसके कुछ सामान तोड़ डाले थे, पर वे इस बीच मे ठीक कर दिये गये थे। प्रभा बोली—"मुझे कोई खास सलाह नहीं लेनी है, कुछ गहनों का लेन-देन है और कोई मामूली हिसाब है।"

..."हाँ, हाँ, इस वक्त मामूली हो सकता है, पर आगे शायद वह चलकर बहुत महत्त्वपूर्ण साबित हो, कानून का नुकता बड़ा अद्भुत होता है।"

वे लोग इसी प्रकार कानून के सम्बन्ध मे बातचीत करते रहे। थोड़ी देर मे किशन वहाँ से उठा, बोला—"देखूँ नेमीचन्द जी क्यों नहीं आ रहे हैं। जरा चलके टेलीफ़ोन करूँ।"

वह जाते समय दरवाज़ा भेड़ गया, और प्रभा को ऐसा मालूम हुआ कि बाहर से सिटकनी चढ़ा दी। थोड़ी देर मे ही बाबू साहब ने अपना असली रूप धारण किया। उसने अपने मुवक्किल को अपने पास घसीट लिया। वह बहुतेरी चिल्लाती रही, पर वहाँ तो कोई सुनने वाला नहीं था, और थोड़ी ही देर मे बाबू साहब ने प्रभा के

चिल्लाने को शान्त कर दिया। बाहर किशन पहरे पर तो था ही।

इसके बाद किशन ने उसे कई दिनों तक उसी बंगले में क़ैद रक्खा, और उसके साथ वही व्यवहार हुआ जो तारा के साथ हुआ था। पर अबकी बार एक भुजालीवाले गुरखे को तैनात कर दिया गया था। बाबू साहब यही समझते थे कि प्रभा केवल उन्हीं के लिये है, पर किशन ने स्वतत्रता दिलाने का लोभ दिखाकर प्रभा को इस बात के लिए राज़ी कर लिया था कि वह बाबू साहब के अतिरिक्त दूसरे मेहमानों का भी मनोरंजन करेगी, और इस बात को बाबू साहब से गुप्त रक्खेगी। गहने पाने की बात तो प्रभा के मन से दूर हो ही चुकी थी, उसके लिये अब यही समस्या थी कि किस प्रकार अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की जाय। इस बंगले में क़ैद होकर रहने से उसे कोई भी जीवन अच्छा मालूम दे रहा था, और उसके सामने दूसरा रास्ता ही क्या था।

: २५ :

रामचरित्र बाबू को एकाएक न मालूम कहाँ से यह मालूम हो गया कि तारा के संबंध मे कोई मामला था, जो दबा दिया गया। उन्हें कुछ ब्योरा मालूम नहीं था, पर जो कुछ मालूम हुआ, वह काफ़ी संदेहजनक था। उस दिन जब वे होटल में पहुँचे, तो नाच की तैयारियाँ थीं। यद्यपि रामचरित्र बाबू कोई बहुत कट्टर व्यक्ति नहीं थे, पर उन्हें इस प्रकार का नाच अच्छा नहीं मालूम होता था। उनका कहना था कि यह भारतीय संस्कृति के विरुद्ध है। असली बात यों थी कि उन्हें नाचना नहीं आता था, इस कारण वे इसे बुरा समझते थे। अब नाच सीखने की उम्र भी नहीं रही थी। फिर न मालूम कब आन्दोलन छिड़ जाय। यद्यपि जहाँ तक उन्हे मालूम था अब आन्दोलन बिना किये स्वराज्य मिलने वाला था।

वे अपने साधारण कमरे में चले गये, और वहाँ उन्होंने किशन को बुलाया। पूछा—"क्यों जी यह तारा का क्या मामला है ? आजकल वह कहाँ है ?"

किशन पहले तो घबड़ाया कि यह क्या किस्सा छिड़ गया। फिर बोला—"क्या बताऊँ हजूर यह सामने के किसान सभा वालों ने क्या क्या आफत ढाई।"

किसान सभा का नाम सुनकर रामचरित्र बाबू को बहुत आश्चर्य हुआ। बोले—"मैं तारा की बात पूछ रहा हूँ।"

..."जी हाँ, यह किसान सभावालों ने तारा को न मालूम क्या पढ़ा दिया, तारा ने मुझ पर मुकद्दमा बाँध दिया, फिर बड़े दारोगा साहब आये, और पन्द्रह सौ रुपये देकर छुटकारा हुआ।

रामचरित्र बाबू के लिये एक-एक बात ही खबर थी। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतनी बातें हो गईं, और उन्हें कुछ पता नहीं लगा, यद्यपि वे बराबर इधर आते रहे। एकाएक रामचरित्र बाबू को इतना चिन्तित देखकर किशन के मन में यह बात आई कि वह ऐसी कोशिश क्यों न करे जिससे कि बड़े दारोगा को सारे रुपये उगलने पड़े। बोला—हजूर अब मेरे साथ क्या बेइन्साफी हुई सो मैं ही जानता हूँ। मै तो बिल्कुल बिक गया। आप लोगों से अठन्नी चवन्नी मिल जाती है, भला मैं पन्द्रह सौ रुपये कहाँ से लाता ? मैं तो बिल्कुल बिक गया।"

पर रामचरित्र ने उसकी इन बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। बोला—"ये किसान सभा वाले इसके बीच में कैसे कूद गये। तारा से इनसे कबकी जान पहचान है ?"

.. "हजूर यह तो मुझे नही मालूम, जो आप बीती सो बता रहा हूँ। कैसे जान पहिचान हुई, क्या हुई, यह तो ईश्वर जाने, पर मै तो बिलकुल बरबाद हो गया।"

..."तारा कहाँ है ?"

किशन को यह पता था कि तारा किसी आश्रम में है। पर उसने कहा—"हजूर मालूम नहीं इन किसान सभावालों ने उसे कहाँ पर छिपाकर रक्खा है।"

रामचरित्र कुछ सोचने लगे, इतने में हुक्कू तथा अन्य मित्र-गण आ गये। किशन ने जब देखा कि अब उसकी दाल नहीं गलेगी तो वह वहाँ से चला गया। पर रामचरित्र आज अच्छी तरह नहीं खुला। उसे किसान सभा वालों पर बड़ा क्रोध आ रहा था कि इन लोगों ने ख्वामख्वाह तारा को इस होटल से अलग कर दिया। यों तो ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध कांग्रेस और किसान सभा एक रहती थी, पर इनमें आपस में बराबर कुछ-न-कुछ नोंक-झोंक

रहा करती थी। अवश्य रामचरित्र बाबू यहाँ की कांग्रेस के एकमात्र नेता नही थे, उनमे से कई नेता बड़े भद्र और शरीफ़ थे, पर जहाँ तक किसान सभा और अन्य इस प्रकार के उपादानों का विरोध करना है, वे सब एकमत थे।

अगले दिन रामचरित्र ढूँढ़-ढाँढ़ कर तारा के पास पहुँचा। तारा ने उन्हे जो कहानो बताई, वह बिल्कुल दूसरी थी, और यह कहानी किसान सभा के विरुद्ध जाने के बजाय उसके पक्ष मे जाती थी।

तारा ने यह भी बताया कि उसे आश्रम का जीवन बिल्कुल पसन्द नहीं है। वह करीब-करीब गिड़गिड़ाकर बोली—"आप मेरा उद्धार कोजिये।"

रामचरित्र ने उसे आश्वासन दिया। वहाँ से वह सीधा नेमीचन्द के पास पहुँचा। रामचरित्र बाबू ने किशन की बड़ी शिकायत की, पर नेमीचद बोला—"पडित जी! अब मैं किसको सच समझूँ और किसको झूठ। किशन कुछ कहता है, तारा कुछ कहती है, आप ही बताइये कि मै क्या करूँ ?" ...फिर ज़रा लहजा बदलकर बोला—"मान लीजिये मै किशन को आपके कहने पर निकाल देता हूँ, तो उसे तो नौकरो मिल जायेगी, उलटा वह चारा तरफ बुराई फैलायेगा।"

..."तो क्या कहते हो ?"

..."मेरा तो यही कहना है कि तारा फिर से आ जावे, और यहाँ काम करे। मैं तो किसी की तरफ प्रतिहिंसा वृत्ति रखना नहीं चाहता। आप लोगों के साथ उठ-बैठकर अगर कुछ नहीं हासिल हुआ, तो इतना तो हासिल हुआ ही कि प्रतिहिंसा अच्छी नहीं।"

दोनों हँसे। यही तय हुआ कि तारा अब होटल मे पहले की तरह काम करेगी।

तारा आश्रम छोड़कर चली आई, और 'होटल डी ताज' में फिर से ग्राहकों का मनोरंजन करने लगी। पर उसने देखा कि नाच का विभाग खुल जाने के कारण अब उसकी ऐसी लड़कियों की कदर सिर्फ रामचरित्र बाबू ऐसे लोगों के निकट ही है जिन्हें सूट-बूट और बो-धारी नाचनेवाले जेन्टलमैन पोंगा समझते थे। इन भारतीय साहबों को शायद ही कभी तारा ऐसी लड़कियों की आवश्यकता पड़ती हो क्योंकि वे लोग तो आपस में ही काम चला लेते थे। अवश्य कभी-कभी वे भी मुँह बदलने के लिये इधर आते थे। सो दूसरी बात है।

प्रभा भी अब तारा के साथ होटल मे काम करती थी। उसने 'स्वेच्छा से' इसी काम को चुन लिया था। और उसकी गति ही कहाँ थी। एक गति आत्महत्या थी, सो उसके लिये वह अपने को तैयार न कर सकी।

होटल डी ताज की बहुत तरक्की हुई थी। उसमें बिलियर्ड रूम भी खुल गया था। सुना तो यह जा रहा था कि किशन अब उसका नौकर नहीं बल्कि हिस्सेदार हो गया है। नेमीचन्द ने तजर्बे से जान लिया था कि किशन अपरिहार्य है।

———

: २६ :

कन्हैयालाल पहले से अपने दफ्तर में आया हुआ था। जब दो दिन बाद अर्णवकुमार आया तो उसने उसे बताया—"तारा फिर से होटल में आ गई है। मैंने उसे अपनी आँख से देखा।"

अपने झोले को डालते हुए अर्णवकुमार बोला—"मैंने तुमको पहले ही कहा था कि इन समस्याओं को एक एक करके पत्ते में पानी डालकर सुलझाया नहीं जा सकता। उसके लिये जड़ का इलाज करना पड़ेगा। मुझे तो कोई आश्चर्य नहीं है।"

कन्हैयालाल बोला—"इस बीच में क्या हो।"

"जो हो रहा है सो ही होगा। क्रान्ति ही इन सारी बातों का इलाज है। अंग्रेज सरकार के जाते ही हमारे रास्ते का पहला रोग हट जायेगा।"...

इसी ढंग पर उसने एक लम्बा-सा व्याख्यान दे डाला। अगले दिन से वह नये उत्साह से अपने काम में जुट गया।

× × ×

..अंग्रेज सरकार चली गई, पर होटल डी ताज अब भी सिर ऊँचा करके एक सड़े गले समाज के प्रतीक के रूप में खड़ा है। अब तो उसके सामने के वे किसान सभा वाले कमरे भी उसके कब्जे में हैं।

॥ समाप्त ॥